Annual Subscription Rs. 100/-

ओ३म्

27th January 2014

आर्य जीवन

ఆర్య జీవన్

संस्कृति संरक्षण व सामाजिक परिवर्तन का संकल्प

హింది-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక

विश्लेषण

प्रभात कुमार रॉय

भारत और चीन के मध्य परस्पर व्यापार बहुत तेजी से बढ़ रहा है, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि इससे दोनों देशों के मध्य तनाव तत्काल कम होगा। चीन और जापान के संबंधों को ही अगर देखें, तो दोनों देशों के बीच व्यापारिक संबंध कायम हैं, किंतु दोनों के मध्य तनाव बरकरार है।

भारत-चीन संबंधों की दिशा

चीन को भी भारत की भांति दुनिया के प्राचीन सभ्यता वाले राष्ट्रों में शुमार किया जाता है। भारत और चीन के मध्य विलक्षण तौर पर सांस्कृतिक और धार्मिक समानताएं विद्यमान रही है। विभिन्न धर्मों, जातियों, नस्लों और भाषाओं वाला प्राचीन राष्ट्र है चीन। चीन के समाज में प्राचीन काल से दार्शनिक कन्फ्यूशियस, लाओ-त्स-जे, ताओ धर्म और बौद्ध धर्म का बोलबाल रहा है। बौद्ध धर्म ने चीन में अपना विशिष्ट स्थान कायम किया। चीन में इस्लाम और ईसाई धर्म के अनुयायियों की भी खासी बड़ी तादाद रही है। 150 करोड़ की विशाल आबादी वाले राष्ट्र चीन ने 1948 में कामरेड माओ और कम्युनिस्ट पार्टी की कयादत में सोशलिस्ट रिपब्लिक ऑफ चाइना की बुनियाद डाली। अनेक ऐतिहासिक सामाजिक और सांस्कृतिक उथल-पुथल के दौर से गुजरते हुए चीन ने 1978 में कम्युनिस्ट लीडर डेंग शियाओपिंग के नेतृत्व में एक नई आर्थिक-सामाजिक करवट ली। 1978 में चीन द्वारा एक नये संविधान को अपनाया गया, जिसमें नागरिकों की धार्मिक और सांस्कृतिक आजादी को समुचित स्थान प्रदान किया गया। 1980 के दशक में चीन ने कठोर समाजवादी अर्थव्यवस्था को बाजार की शक्तियों के हवाले किया और शनैः शनैः अपने दरवाजे विदेशी पूंजी निवेश के लिए खोल दिये। बाजारपरस्त आर्थिक सुधारों ने चीन की राजनीतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक जिंदगी पर निर्णायक असर दिखाया। चीन में एकाधिकारिक कम्युनिस्ट शासन पद्धति के विरोध में बहुदलीय लोकतंत्र के पक्ष में सशक्त आवाज बुलंद होने लगी। बहुदलीय लोकतंत्र के समर्थन में चीनी नौजवानों का आंदोलन इतना विशाल और प्रबल हो उठा था कि बीजिंग के थ्यानमैन चौक पर उसे चीनी हुकूमत द्वारा लाल फौज की ताकत से कुचलना पड़ा।

चीन में आज भी बहुदलीय लोकतंत्र के हक में एक सशक्त राजनीतिक अंतरधारा विद्यमान है, जो कि कम्युनिस्ट पार्टी के एकदलीय शासन को खत्म करके बहुदलीय शासन व्यवस्था कायम करना के लिए कटिबद्ध है। बाजारवादी समाजवाद के अभिनव आर्थिक प्रयोग ने चीन को आर्थिक तौर पर काफी कुछ समृद्ध तो अवश्य ही बना दिया, किंतु समाज में अमीरों और गरीबों के मध्य आर्थिक खाई को भी जन्म दिया है। चीन में यकीनन गरीबी और बेरोजगारी का कहर भारत सरीखा नहीं है। चीन में बालश्रमिक भी विद्यमान नहीं है। सभी बच्चों के लिए शिक्षा उपलब्ध है। बड़े बूढ़ों का खास खयाल चीनी समाज में रखा जाता है, लेकिन संपन्न शहरों में मजदूरों की हालत को संतोषजनक नहीं कहा जा सकता है और गांव-देहात में किसान की हालत भी बहुत कुछ शहरी मजदूरों सरीखी है, किंतु भारत की तरह वे आत्महत्या करने पर बिल्कुल विवश नहीं हैं। चीन के समाज में महिलाओं को बराबरी के हक हासिल हैं। चीन की महिलाओं पर पाश्चात्य फैशन संस्कृति का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है। कामरेड माओ के शासनकाल से उलट सारांश में आजकल चीन में पछुवा हवा पुरवा हवा पर हावी हो रही है।

भारत और चीन के परस्पर कूटनीतिक संबंधों के अनेक पहलू हो सकते हैं। पहला, क्या भारत और चीन परस्पर दोस्त बन सकते हैं, यदि ऐसा मुस्तकबिल में मुमकिन हो सका तो यह अत्यंत सौभाग्यशाली बात होगी। दूसरा, भारत और चीन परस्पर प्रतिस्पर्द्धी बने रहें। ऐसी स्थिति में दोनों राष्ट्रों को अंतरराष्ट्रीय नियमों-कायदों के तहत ही प्रतिस्पर्द्धा करनी चाहिए। तीसरा, दोनों देश एक दूसरे के दुश्मन और विरोधी ही बने रहें। भारत ने चीन को यह स्पष्ट पैगाम दिया है कि आपसी शत्रुता, वैमनस्य और विरोध का तत्काल परित्याग कर दिया जाए। यह तो भविष्य ही बताएगा कि तीनों पहलुओं मे से कौन-सा प्रमुखता से सामने आता है। बहरहाल, इतना तय है कि भारत को चीन के विषय में अधिक से अधिक समझ, सूचनाएं, जानकारियां, ज्ञान और विद्वता हासिल करनी चाहिए।

‘आर्य, आर्य समाज और आर्य महासम्मेलन’

–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

आर्य शब्द मनुष्य निर्मित शब्द न होकर परमात्मा की देन है जो उसने वेद के माध्यम से सश्ष्टि के आरम्भ मे ही हमें दिया गया था। वेद वह ईश्वरीय ज्ञान है जो ईश्वर ने सश्ष्टि की आदि में चार ऋषि अग्नि, वायु, आदित्य तथा अंगिरा के हश्दय में प्रेरणा द्वारा स्थापित किया। वेदों में अनेकों स्थानों पर मनुष्यों के लिए ''आर्य'' शब्द का प्रयोग मिलता है। आर्य शब्द एक गुणवाचक शब्द व नाम है जिसे हम सश्ष्टि के सभी मनुष्यों को बिना उनका निज नाम जाने सम्बोधन के लिए प्रयोग कर सकते हैं। यह ऐसा ही है जैसे अंग्रेजी में अनजान व्यक्ति या व्यक्तियों को सम्बोधन के लिए ‘जेन्टलमैन’ शब्द का प्रयोग करते हैं। जेन्टलमैन के अर्थ हैं शिष्ट व्यक्ति। यही भावना व इससे कहीं अधिक प्रभावशाली शब्द आर्य है। पहला कारण तो यह हमें इस संसार के निर्माता ईश्वर से प्राप्त हुआ है। दूसरा इसके अर्थ देखने पर यह विदित होता है कि इसमें अनेकानेक गुणों का समावेश है। क्या ऐसे गुण संसार के किसी अन्य शब्द में हैं जिसका प्रयोग हम मनुष्यों के लिए करते हैं? यदि नहीं हैं तो इसे अपनाने व अन्य अल्प गुण व अल्प भद्रभाव वाले शब्दों को छोड़ने में हमें क्यों आपत्ति है? आईये आर्य शब्द में निहित वाच्यार्थ व भावार्थ को देखते हैं। आर्य शब्द में श्रेष्ठ स्वभाव, धर्मात्मा, परोपकारी, सत्य-विद्यादि गुणयुक्त और आर्य देश में उत्पन्न होना व बसना आदि गुण व भाव निहित हैं। इसका यह भी अर्थ है आर्य दुष्ट स्वभाव से पश्थक होता है, उत्तम विद्यादि के प्रचार से सबके लिए उत्तम भोग की सिद्धि और अधर्मी दुष्टों के निवारण के लिए निरन्तर यत्न करता है। अतः आर्य कहलाने वाले व्यक्ति सत्यविद्या आदि शुभ गुणों से अलंकश्त होते हैं।

आर्य ज्ञान पूर्वक गमन करते हुए अपने उद्देश्य की पूर्ति करने वाले व्यक्ति को भी कहते हैं। आर्य, कश्त्रिम जीवन व स्वभाव से दूर होता है व उसका जीवन व स्वभाव सत्य से पूर्ण होता है। आर्य असत्य से घश्णा करता है व सत्य के प्रति उसमें स्वभाविक रूचि व उसे ग्रहण व धारण करने का स्वभाव होता है। इस प्रकार वह सत्यप्रिय, सत्यवादी, सत्यमानी व सत्यकारी होता है। आर्य वह होता है जो ईश्वरीय ज्ञान वेदों को अपना धर्म ग्रन्थ, प्रेरणा ग्रन्थ व उसके सश्ष्टिक्रम के अनुकूल, सत्य, ज्ञान, व्यवहारिक व मानवीय हित से संगत अर्थो के अनुसार जीवनयापन करता है। वेद को पढ़ना-पढ़ाना व सुनना सुनाना उसका परम धर्म होता है। वेद की शिक्षाओं को धारण व पालन कर ही आर्य बना जा सकता है। आर्य वह भी होता जो शान्ति व लोक कल्याण की भावना वालों से वैर या शत्रुता नहीं रखता। उसमें अहंकार नहीं होता जिससे वह कभी कोई दुष्कर्म नहीं करता और इस कारण कभी पतित भी नहीं होता। आर्य, पात्र व्यक्तियों व संस्थाओं को उनके पोषण व उद्देश्य की पूर्ति के लिए यथाशक्ति दान देता है। महर्षि दयानन्द के अनुसार धार्मिक, विद्वान, देव व आप्त पुरूषों का नाम आर्य है। आर्य मांस भक्षण, मद्यपान, धूम्रपान, नाना अभक्ष्य पदार्थो का सेवन नहीं करता और ऐसे लोगो की संगति से सदैव दूर रहता जिससे यह दुर्गण उसको न लग जायें। समाज के अग्रणीय आर्यो के घरों में भोजन पकाने का कार्य अज्ञानी, मूर्ख व पवित्र कर्मो को करने वाले लोग करते थे जिनकी प्राचीन काल में शूद्र संज्ञा थी। शूद्र जाति सूचक शब्द न होकर ज्ञान की कमी वाले व्यक्तियों के लिए प्रयोग में लाया जाता है। गुण, कर्म व स्वभाव से शूद्र भी सत्यवादी, सत्यमानी, धर्मात्मा व गुणी होता है। गुण, कर्म व स्वभाव पर आधारित ब्राह्मणों, क्षत्रियों व वैश्यों की संगति से उसके अन्दर विद्या से इतर सभी गुण, कर्म व स्वभाव, शुद्धता व पवित्रता आदि गुण भी, आ जाते हैं व उसकी सन्तानें अध्ययनोपरान्त आर्य तथा गुण, कर्म व स्वभाव के अनुसार द्विज हो जाती हैं। आर्य ब्रह्मचर्य सेवी होते हैं और सन्ध्या, अग्निहोत्र आदि पंच महायज्ञों को विधि विधान के अनुसार करते हैं। वेदों में ईश्वर कहते हैं कि उन्होंने यह सश्ष्टि व भूमि आर्यो के लिए बनाई व उन्हें दी है, अनार्यो को नहीं। अतः अनार्यो को भी आर्य बनने का प्रयत्न, अर्थात् आर्यों के गुण, कर्म व स्वभाव को धारण व पालन करके अपना कल्याण करना चाहिये।

आज कल वैदिक धर्मी व इतर धर्मावलम्बी लोगों में आर्यो की गुण ग्राहकता की प्रवश्ति का अभाव पाया जाता है। यह आश्चर्य है कि अभक्ष्य पदार्थ, पशु-पक्षियों के मांस व अण्डे आदि का सेवन करने व दूसरों का अहित करने वाले चतुर-चालाक लोग स्वयं को श्रेष्ठ मानते हैं और कोई खुलकर उनके आचरण को अनुचित कहने का साहस नहीं करता। हमारे चिन्तन के अनुसार इसका कारण उनका ईश्वर के सत्य स्वरूप व कर्म फल के सत्य सिद्धान्तों को न जानना व न मानना है। वह तो पापों के क्षमा होने में विश्वास रखते हैं और शायद् इसी कारण भी अनुचित कर्म या पाप कर्मो को करते हैं। वेदों के प्रमुख विद्वान तथा निरूक्त व निघण्टु के प्रणेता आचार्य यास्क ‘आर्य’ को ईश्वर का पुत्र घोषित करते है। वेद के अनुसार आर्य ''अमश्तस्य पुत्रः'' हैं। इसका तात्पर्य भी अविनाशी परमात्मा की तरह आर्य भी अविनाशी व मोक्ष सुख को प्राप्त करने वाले उसके ऐसे पुत्र है जिनकी कार्यो से वह अतीव प्रसन्नता अनुभव करता है। आर्य शब्द उनके लिए भी अभिहित है जो सदा से आर्यावर्त में रहते आयें हैं तथा जो इस आर्यावर्त वा भारतवर्ष को अपनी जन्मभूमि, मातश्भूमि, पितश्भूमि, कुलभूमि व पुण्य भूमि मानते हैं तथा अपनी जन्मभूमि की तुलना में अन्य किसी देश की भूमि को उच्च या महान नहीं मानते। आर्य की एक परिभाषा यह भी है कि आर्य कर्तव्यों का पालक और अकर्तव्यों का निरोधक तथा ईश्वर की आज्ञानुकूल चलने वाला होता है। वह आठ गुणों यथा ज्ञान, सन्तोष, संयम, सत्याचरण, जितेन्द्रियता, दान, दया और विनय से युक्त होता है। पारसी मत की धर्म पुस्तक जिन्दावस्ता में कहा गया है कि हम आर्यो के सम्मानार्थ हवन करते हैं जिन्हें मजदा परमेश्वर ने बनाया है। अहुरमजदा भगवान ने जरदुश्त से कहा कि मैंने आर्यो को भोजन, पशु समूह, धन, प्रतिष्ठा, ज्ञान-भण्डार और द्रव्य राशि से सम्पन्न किया है जिससे वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें। ईरान के राजा तो अपने नाम से पूर्व आर्यमिहिर शब्द का प्रयोग किया करते थे। ऋग्वेद के मन्त्र ''इन्द्रं वर्धन्तोऽप्तुरः कश्ण्वन्तो विश्वमार्यम्। अपघ्नन्तो अराव्णः।।' में कहा है कि दस्युओं को निस्तेज व प्रभावहीन कर सारे विश्व को आर्य अर्थात् श्रेष्ठ गुण-कर्म-स्वभाव युक्त करो वा बनाओं।

इन सब गुण व विशेषणों के अतिरिक्त आर्य वह भी होता है जो पूर्णतः अंहिसक हो और विपरीत किन्ही भी परिस्थितियों में कभी निराश

 (शेष पृष्ठ १७ पर)

ओ३म्

आर्य जीवन

संस्कृति संरक्षण व सामाजिक परिवर्तन का संकल्प

ఆర్య జీవన్

హింది-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక

आर्य प्रतिनिधि सभा आन्ध्र प्रदेश हैदराबाद का मुख पत्र

वर्ष : २३ अंक : २
दयानन्दाब्द : १८९
सृष्टि संवत् :१९६०८५३११४
वि.सं. : २०७०
नंदन नाम संवत् मार्गशीर कृष्ण पक्ष

सम्पादक
विठ्ठलराव आर्य

वार्षिक मूल्य रू. 100

कार्यालय
आर्य प्रतिनिधि सभा आन्ध्र प्रदेश
महर्षि दयानन्द मार्ग, सुल्तान बाजार, हैदराबाद

दूरभाषः 040-24753827, 66758707, 24750363
फ्याक्सः 040-24557946, 24756983

Email :
aaryajeevan_aaryajivan@yahoo.co.in.
arpratinidhisabha@yahoo.co.in.
acharyavithal@gmail.com,
aryavithal@yahoo.co.in.

THE VIEWS & THE NEWS PUBLISHED IN THIS ISSUE MAY NOT NECESSARILY BE AGREEABLE TO THE EDITOR

प्रत्येक मनुष्य को पुरुषार्थ पर ध्यान देना चाहिए। इसी के द्वारा क्रियामाण, संचित और प्रारब्ध कर्म की स्थिति सुधरती है। इसी से मनुष्य उत्तम स्थिति को प्राप्त हो कर उन्नति के पात्र बनते है।

भारत-चीन संबंधों की दिशा

सांस्कृतिक और धार्मिक तौर पर गहन समानता रखने वाले भारत और चीन को दशकों से जारी सीमा विवाद ने एक दूसरे से काफी अलग-थलग कर दिया है, हालांकि दोनों देशों के मध्य अरबों डॉलर का व्यापार बाकायदा जारी रहा है। दोनों राष्ट्रों के दरम्यान सीमा विवाद पर जो करार हुआ है, वह महत्वपूर्ण अर्थ रखता है। दोनों की कोशिश है कि सरहद पर सैन्य टकराहट और संघर्ष की स्थिति को टाला जाए। दोनों के मध्य हॉटलाइन सुविधा उपलब्ध होगी, ताकि दोनों तरफ से स्पष्टीकरण बाकायदा दरियाफ्त किया जा सके। अब भारत सरहद के निकट आवश्यक इंफ्रास्ट्रक्चर और सुविधाओं का तेजी से विकास कर सकेगा। भारत को सरहद पर सड़क और हवाई पट्टियों का निर्माण करने को प्राथमिकता देनी होगी।

भारत ने चीन के समक्ष पाकिस्तान द्वारा प्रायोजित आतंकवाद के मुद्दे को भी सफलतापूर्वक उठाया है। चीन ने भारत की बात को गौर से सुना है, क्योंकि स्वयं चीन भी जिनजियांग प्रांत में जेहादी आतंकवाद की जबरदस्त आग झेल रहा है। आतंकवाद के प्रश्न पर भारत और चीन के मध्य परस्पर सहयोग करने की प्रबल संभावना हैं। उम्मीद है कि जेहादी आतंकवाद के प्रश्न पर चीन भारत के निकट आएगा। भारत और चीन के मध्य परस्पर व्यापार बहुत तेजी से बढ़ रहा है, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि इससे दोनों देशों के मध्य तनाव तत्काल कम होगा। चीन और जापान के संबंधों को ही अगर देखें, तो दोनों देशों के बीच व्यापारिक संबंध कायम हैं, किंतु दोनों देशों के मध्य तनाव बरकरार है। चीन की यही स्थिति ताइवान, मलेशिया, वियतनाम और फिलिपींस के साथ है। चीन इन देशों के इलाकों पर अपना दावा छोड़ने को कतई तैयार नहीं है। भारत को संजीदा कोशिश करनी चाहिए कि चीन के साथ वैसी ही जल संधि संपन्न हो सके, जैसी भारत ने पाकिस्तान के साथ संपन्न कर रखी है। भारत ने ऐसा न किया, तो आपसी समस्या बढ़ती चली जाएगी। यह बात सर्वविदित है कि चीन ब्रह्मपुत्र नदी पर छोटे-बड़े बांधों को निर्मित कर रहा है।

भारत के समस्त कूटनीतिक प्रयास सकारात्मक रहे हैं। भारत के कूटनीतिज्ञों ने चीन में सवाल उठाया कि मुद्दा भारत बनाम चीन क्यों रहा है, जो कि वस्तुतः भारत चीन सहयोग होना चाहिए? भारत की पहल का चीन में स्वागत हुआ है। चीन को अपनी आर्थिक और सैन्य शक्ति पर कुछ अधिक ही गुमान हो गया है और स्वयं को महाशक्ति की कतार में शुमार करने लगा है। भारत को चीन के मुकाबले एक बड़ी आर्थिक और सैन्य शक्ति बनने का प्रयास करना होगा, क्योंकि परस्पर कूटनीतिक संबंधों को संतुलित करने में आर्थिक और सैन्य शक्ति की भाषा का एक जबरदस्त किरदार रहा है।

(चीन के शहर शंघाई से)

आर्यसमाज सेवाकारियों से जोडे आमजन को

- अर्जुनदेव चड्ढा

आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानंद सरस्वतीजी ने आर्य समाज के छठे नियम 'संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है।' अर्थात् शारीरिक, आत्मिक औरसामाजिक उन्नति के द्वारा समाज में आर्य समाज की भूमिका को स्पष्ट रूप से प्रतिपादित कर दिया एवं कहा कि विश्व का समष्टिगत कल्याण ही आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य है। आर्य समाज का जो एक सच्चा धार्मिक, आध्यात्मिक, सामाजिक, राष्ट्रवादी व मानवतावादी संगठन है, उसका वर्तमन में वैसा प्रचार नहीं है, जैसा होना चाहिए।

यद्यपि आर्य समाज द्वारा अपनी हज़ारो संस्थाओं के माध्यम से समाज से पाखण्ड, अंधविश्वास घटाने के साथ-साथ वेद के प्रचार का कार्य किया जा रहा है। किन्तु उसका वह परिणान नहीं दिखाई दे रहा है, जो इसकी स्थापना के समय सोचा गया था। यदि सूक्ष्म दृष्टि से विचार किया जाए, तो इसका कारण है आर्य समाज द्वारा अपने कार्यो को लोगों को बेहतर ढंग से नहीं पहुँचा पाना। आज भी समाज में अधिकांश लोग यही मानते हैं कि आर्य समाज ईश्वर को न मानने वाली संस्था है और जो थोड़े बहुत शिक्षितजन इससे परिचित हैं, वे भी यही मानते हैं कि यह अंध विश्वास को न मानने वाली और हवन कराने वाली संस्था है।

इसका सबसे बड़ा कारण है आज आर्य समाज ने अपने सामाजिक सरोकार को लगभग छोड़ ही दिया है और जो थोड़े-बहुत कार्य किये जा रहे हैं, उनकी स्थिति ऊँट के मुँह में जीरे के समान है। उनमें भी अधिकांश कार्य आर्य समाज की चार-दीवारी के अंदर ही किये जाते हैं, इस कारण समाज के लोगों का सीधा आर्य समाज से कोई जुड़ाव नहीं हो पाता है।

आर्य समाज द्वारा वर्तमान में अधिकांशतः किये जाने वाले कार्यों में यज्ञ, हवन तथा वार्षिकोत्सव पर भजन एवं प्रवचन का आयोजन है, जिनमें अधिकतम मात्र आर्य समाजी ही सम्मिलित होते हैं। समाज के अन्य वर्ग नहीं।

यदि देखा जाए, तो हमारे वर्तमान में कार्य आर्य समाज के छटे नियम के उद्देश्य को उस रूप में व्यक्त नहीं करते हैं, जिसका निर्धारण महर्षि ने आर्य समाज की स्थापना के अवसर पर किया था। यदि हमें आर्य समाज का प्रचार-प्रसार कर उसे जन-जन तक पहुँचाना है, तो हमें अपने द्वारा किये जा रहे कार्यों में समाजसेवा और सामाजिक सरोकार के कार्यों को अनिवार्य रूप में सम्मिलित करना होगा। इतिहास साक्षी है कि मात्र समाजसेवा के कार्यों को अपनाकर ही ईसाई मिशनरियों ने ईसाइयत को दुनिया के कोने-कोने तक पहुँचा दिया है। हमारे कहने का मतलब यह बिल्कुल नहीं है कि हम भी ईसाई मिशनरियों के समान छल का प्रयोग कर अपने उद्देश्य को पूर्ण करें, किन्तु उनसे इतनी शिक्षा तो ले ही सकते हैं कि हम समाजसेवा के ऐसे-ऐसे कार्यों को करें, जिसमें आम आदमी का हमसे सिरा जुड़ा हो सके और आर्य समाज के बारे में फैली भ्रांति का इसके मन से निवारण हो सके तथा वह भी इस महान ऐतिहासिक आंदोलन से जुड़कर अपने को गौरवान्वित अनुभव करें।

इसलिए अब समय आ गया है कि हम अपने समाज सेवा के कार्यों को प्रमुख स्थान प्रदान करें, क्योंकि जब तक हम लोगों की सामाजिक उन्नति नहीं करेंगे, तब तक उनकी आत्मिक उन्नति की कल्पना करना ही व्यर्थ है। इस मामले में हम आर्य समाज, कोटा के उदाहरण को आदर्श रूप में ले सकते हैं, जहाँ जिले में स्थित बारह आर्य समाजों द्वारा एकजुट होकर ज़िला आर्य प्रतिनिधि सभा के निर्देशन में वर्षभर समाजसेवा के कार्यों को किया जाता है। कुष्ठरोगियों की बस्ती में यज्ञ करना, उनको वस्त्र तथा खाद्य सामग्री प्रदान करना, निराश्रित बालगृहों में वस्त्र तथा अन्य दैनिक जीवन की वस्तुएं प्रदान करना, सरकारी तथा निजी विद्यालयों में निःशुल्क पाठ्यसामग्री वितरित करना, सर्दी में ठिठुरते हुए रात को फुटपाथ पर सोने वाले लोगों को कम्बल बांटना और ओढ़ाना, अनाथ तथा ज़रूरतमंदों को नये तथा पुराने वस्त्र वितरित करना, महिलाओं को वस्त्रवितरण तथा उनके सशक्तिकरण के लिए प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन, विकलांगों को सहायता उपलब्ध करना, प्रतिवर्ष बरसात में वृक्षारोपण करवाना, समय-समय पर विभिन्न रोगों के उपचार के लिए चिकित्सा शिविरों का आयोजन, रक्तदान शिविरों का आयोजन, सेरिब्रल पाल्सी शिविरों का आयोजन, युवाओं के लिए आत्मरक्षा शिविरों का आयोजन, जेल में जाकर बंदियों के लिए कम्बल वितरण तथा समय-समय पर उनके लिए यज्ञ व प्रवचनों का आयोजन, पक्षियों के लिए ग्रीष्म ऋतु में कोटा नगर में स्थान-स्थान पर परिण्डों को बाँधना, दलित बस्तियों में यज्ञों का आयोजन तथा उनकी समस्याओं का निराकरण करवाना, नशामुक्ति तथा बालविवाह रोक के लिए अभियान चलाना, योग कक्षाओं का आयोजन जैसे अनेक समाजसेवा के कार्य कोटा के आर्य समाज द्वारा किये जा रहे हैं।

यहाँ तक कि सामान्य रूप में आर्य समाज द्वारा अपने वार्षिकोत्सव भी आर्य समाज में मंदिर परिसर में ही मनाये जाते रहे हैं। यद्यपि उदाहरण

(शेष पृष्ठ १६ पर)

प्रधानमंत्री और आतंकवाद

-राजनाथ सिंह 'सूर्य'

गृहमंत्री सुशीलकुमार शिंदे के बाद प्रधानमंत्री मनमोहन ने भी चुनाव के समय तंकी हमले की आसंका जताई है। इंटेलजिंस ब्यूरो तो बहुत पहले से कई बार यह कह चुका है कि आतंकियों के निशाने पर मुख्य रूप से गुजरात के मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी हैं। खबर तो यहाँ तक प्रकाशति हुई कि 'इंडियन मुजाहिदीन' की मदद से इस काम को अंजाम देने की कमान पाकिस्तानी गुप्तचर संस्था आईएसआई ने दाऊद इब्राहिम को सौंप दी है। भाजपा की पटना में आयोजित नरेंद्र मोदी की हुंकार रैली के समय जो कुछ हुआ, उससे कोई भी अपरिचित नहीं है। यह बात अलग है कि बहिार के मुख्यमंत्री नतिशि कुमार ने उसका संज्ञान उसी प्रकार लेने की आवश्यकता नहीं समझी, जैसी भटकल की गरिफ्तारी। बिहार का नेपाल से लगा सीमांत भाग आतंकियों का मुख्य गढ़ बन गया है। यह भी लोगों के संज्ञान में आ चुका है कि जम्मू-कश्मीर सरकार द्वारा 'पुनर्वास' योजना का लाभ उठाकर अनेक आतंकी भारत लौट रहे हैं। यह सब जानकारी होने के बावजूद सरकार क्या कर रही है? मोदी की सुरा बढ़ाने के आग्रह को न केवल उसने अस्वीकर कर दिया है, अपितु मोदी के खिलाफ 'घृणा' अभियान को आंधी-तूफान की तरह चलाकर समाज के एक वर्ग में- जिससे मुजाहिदीन भर्ती किये जाते हैं- ऐसी उत्तेजना पैदा करने में लगे हैं, जो पाकिस्तानी हस्तकों का काम आसान कर सकती है। मज़हबी उन्माद पैदा करने वालों को बढ़ावा देने के लिए एक केंद्रीय मंत्री ने यहाँ तक कह डाला कि उत्तर प्रदेश के मुजफ्फर नगर में गुजराती पुलिस भेजकर दंगा कराया गया। उत्तर प्रदेश की समाजवादी सरकार न केवल दंगों के ऐसे आरोपियों को प्रश्रय दे सक रही है, जिनके खिलाफ पूरे सबूत उपलब्ध हैं, बल्कि एक पक्षीय हरकतों के लिए सर्वोच्च न्यायालय और इलाहाबाद उच्च न्यायालय की लताई झेलने के बावजूद वर्गीय उत्तेजना को बढ़ावा देने से बाज़ नहीं आ रही है। सबसे पहले सर्वोच्च न्यायालय ने उसे दंगे में हताहतों की संख्या हिंदू और मुसलमान ब्यौरे के साथ दिये जाने पर चेतावनी दी। उसके बाद पुनर्वास में केवल मुसलमानों को ही सहायता देने के आदेश को वापस लेने पर बाध्य किया। इस दंगे में दंगा भड़काने या दंगाइयों को बचाने के प्रमाण जनपद और प्रदेश सरकार के पास हैं, जिनके खिलाफ उसी धारा में मुकदमा दर्ज है, जिस धारा में हिंदुओं पर। लेकिन उसने गिरफ्तार केवल हिंदुओं को ही किया है। यहाँ तक कि फ़र्ज़ी पुलिस 'रिपोर्ट' के आधार पर जिन दो भाजपा विधायकों पर रासुका लगाया गया था, उसकी पुष्टी करने के लिए गठित न्यायाधीशों की समिति ने सहमति नहीं प्रदान की, क्योंकि जिस पुलिस कर्मी के कथित मौखिक जानकारी के आधार पर यह रिपोर्ट दर्ज की गई थी, उसने इससे साफ इन्कार कर दिया है। भाजपा ने आगरा में इन विधायकों की बेगुनाही साबित होने पर जिस दिन उनका अभिनंदन किया, उसी दिन बरेली में अनेक आरोपियों को मंच पर सम्मानित ही नहीं किया गया, अपितु भाजपा विधायकों पर और भी मुकदमे कायम कर दिये गये। उच्च न्यायालय ने न केवल सरकार से केवल हिंदुओं के ही हथियार ज़ब्त करने पर जवाब तलब किया है, बल्कि एक अन्य वाद का भी संज्ञान लिया है, जिसमें मुजफ्फर नगर शामली से एक ही जाति - जाट के सभी पुलिस कर्मियों को हटाया जाना है, इसने सरकार से पूछा है कि इसका क्या औचित्य है। इनमें वे पुलिस कर्मी भी शामिल है, जिन्होंने एक हत्या के आरोपी नौ लोगों को थाने से छोड़ देने और मुकदमा कायम करने के लिए मुलायम सिंह यादव के लडले मंत्री आज़म खां को ज़िम्मेदार बताया था। भारत सरकार संसद के आगामी सत्र में दंगों को नियंत्रित करने के लिए एक ऐसा विधेयक पेश करने जा रही है, जिसमें आक्रमक वर्ग के साथ भेदपूर्ण नीति अपनाने के प्रावधान का आरोप है।

प्रधानमंत्री द्वारा देश की संपदा पर अल्पसंख्यकों का पहला हक करार देने के बाद केंद्र के अल्पसंख्यक कल्याण मंत्रीके.आर. रहमान जिस व्यवस्था को लागू करने का सार्वजनिक आग्रह कर रहे हैं, वह १९४७ की मुस्लिम लीग की माँगों से भी आगे बढ़ गई है। वोट बैंक की राजनीति ने विभिन्न राजनीतिक दलों में सांप्रदाईक विद्वेश को बढ़ावा देने के लिए अनेक कार्यक्रमों को अंजाम देना शुरू कर दिया है। इस मुस्लिम परस्ती ने उन लोगों को उभारने का प्रोत्साहन दिया है, जो आसानी से पाकिस्तानी हस्तक हनने के लिए तैयार हैं। आज-कल मुस्लिम समुदाय में सारी आबादी को ही आतंकी समझे जाने के प्रति अत्यधिक रोष है, जो स्वाभाविक है। इस रोष को आतंकी हमलों में शामिल संगठनों के खिलाफ कार्यवाही करते रहने के बावजूद उनके साथ सहानुभूति प्रदर्शित करने तथा संतुलन कायम करने के लिए हिन्दू आतंकवाद का राग छेड़कर और विषाक्त कर दिया गया है। फलतः कुछ महीने पूर्व तक मुस्लिम समुदाय में पिछली बातों को पीछे छोड़कर आगे बढ़ने की मानसिकता का जो प्रभाव दिखाई दे रहा था, वह विलुप्त हो गया है। महंगाई, भ्रष्टाचार और कुशासन के साथ घोटाले पर घोटालों से खोखली होती अर्थव्यवस्था को छिपाने के प्रयास में लगा केंद्रीय सत्तारूढ़ दल माहौल को बिगाड़ने का कोई अवसर हाथ से जाने नहीं दे रहा है। एक ओर भारत सरकार भारत में आतंकी गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए पाकिस्तान को सबूत देने में लगी होने का दावा करती है, तो दूसरी ओर जो लोग जम्मू-कश्मीर को भारत से अलग करने की मुहिम चलाए हुए हैं, उन्हे पाकिस्तान के हुक्मरानों से मिल-बैठकर वार्ता का अवसर प्रदान करती है। क्या

(शेष पृष्ठ १६ पर)

‘गुरूकुल षिक्षा प्रणाली बनाम् पब्लिक स्कूल’

–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

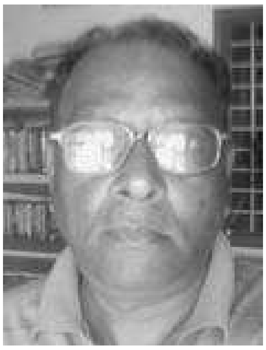

मानव सन्तान को शिक्षित करने के लिए एक पाठशाला या विद्यालय की आवश्यकता होती है। बच्चा घर पर रह कर मातश भाषा तो सीख जाता है परन्तु उस भाषा, उसकी लिपि व आगे विस्तश्त ज्ञान के लिए उसे किसी पाठशाला, गुरूकुल या विद्यालय मे जाकर अध्ययन करना होता है। केवल भाषा से ही काम नहीं चलता अपितु अनेक विषय हैं जिनका ज्ञान गुरूकुल, पाठशाला या विद्यालय में कराया जाता है। उदाहरण के लिए मातश भाषा के साथ हिन्दी, संस्कश्त, अंग्रेजी व कुछ अन्य भाषायें भी आवश्यकतानुसार सीखनी होती है। भाषा के साथ गणित, सामान्य ज्ञान, कुछ अध्यात्म, इतिहास, भूगोल, जीव विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, व्यायाम, रक्षा, चिकित्सा, कला आदि अनेक विषय हैं जिनका ज्ञान आज के समय में अति आवश्यक है। जीवन में मनुष्य को अपना व अपने भावी परिवार का जीवनयापन भी करना होता है अतः रोजगार दिलाने वाले व्यवसायिक विषयों का ज्ञान भी आवश्यक है। आजकल माता-पिता अपने सन्तानो को विज्ञान, वाणिज्य, कम्प्यूटर साइंस, इंजीनियरिंग व चिकित्सा आदि की शिक्षा दिलाते हैं जिससे वह किसी रोजगार से जुड़ कर सफलतापूर्वक भावी जीवन व्यतीत कर सके।

शिक्षा पद्धति की चर्चा आने पर आजकल मुख्य रूप से पब्लिक स्कूल पद्धति प्रचलित है जहां बच्चे को प्रायः अंग्रेजी भाषा के माध्यम से अध्ययन कराया जाता है और इसी भाषा के माध्यम से उसे गणित, साइंस व कला की शिक्षा दी जाती है। इण्टर या ग्रेजुएशन कर लेने पर वह इंजीनियरिंग, मेडीकल साइंस आदि अपने इच्छित विषय को लेकर व्यवसायिक कोर्स या स्नातक व स्नातकोत्तर उपाधियां प्राप्त कर सकता है जिसके बाद उसे रोजगार मिल जाता है और वह सुख-सुविधा पूर्वक जीवन व्यतीत करता है। दूसरी शिक्षा पद्धति हमारी प्राचीन गुरूकुलीय पद्धति है। गुरूकुल का उद्देश्य बालक का शारीरिक, बौद्धिक, मानसिक व आत्मिक सर्वांगीण विकास करना होता है। ***यहां हम शिक्षा के बारे मे स्वामी दयानन्द की मान्यता का उल्लेख करना उचित समझते हैं। वह लिखते हैं कि शिक्षा उसको कहते हैं जिससे विद्या, सभ्यता, धर्मात्मता व धर्म में प्रवश्त्ति, जितेन्द्रियतादि की वश्द्धि होवे और अविद्यादि दोष छूटें।*** अज्ञान व बन्धनों से छूटना जिससे सिद्ध हो वह भी विद्या होती है। शिक्षा व भाषा अर्थात् शिक्षा का मरध्यम का भी परस्पर गहरा सम्बन्ध है। बच्चा अंग्रेजी पढ़े इससे किसी का विरोध नहीं है परन्तु पहले वह मातश भाषा सीखे, तत्पश्चात, भारत पश्ष्ठभूमि का बच्चा, हिन्दी व संस्कश्त भाषा का ज्ञान प्राप्त करे, इनके माध्यम से वेद, उपनिषद्, दर्शन, मनुस्मश्ति, बाल्मीकी रामायण व महाभारत आदि का विस्तश्त या काम चलाऊ ज्ञान प्राप्त करे, उसके बाद व साथ में वह अंग्रेजी, गणित व साइंस आदि विषयों का ज्ञान भी प्राप्त करे तो इसमें किसी को क्या आपत्ति हो सकती है। **हिन्दी व संस्कश्त के ज्ञान से वह भारत के आम व्यक्ति से जुड़ जाता है जबकि पहली कक्षा से अंग्रेजी का अध्ययन उसे कई प्रकार से हिन्दी पश्ठभूमि के बच्चों से दूर करता है।** हिन्दी में भी ज्ञान, विज्ञान सहित इतिहास, भूगोल व अध्यात्म विषयक विशद साहित्य है जो केवल अंग्रेजी को जानकर व उसमें अध्ययन कर उनसे लाभान्वित नहीं हुआ जा सकता। ऐसा व्यक्ति सर्वांगीण व्यक्तित्व वाला न होकर एकांगी होता है। अन्य विषयों की शिक्षा के साथ अध्यात्म विज्ञान विषय का विशद ज्ञान तो अनिवार्य कोटि में आना चाहिये इससे व्यक्ति चरित्रवान व कर्तव्यनिष्ठ नागरिक बनता है।

अध्यात्म का अनिवार्य ज्ञान क्यों?, तो इसका उत्तर है कि प्रत्येक मनुष्य को सर्वप्रथम यह जानना है कि यह संसार कब, कैसे व किसके द्वारा बनाया गया है। संसार को बनाने वाली सत्ता कौन है व अब कहां है? वह दिखाई क्यों नहीं देती? क्या उसे देखा जा सकता है? यदि हां तो कैसे और नही तो क्यों? उसका देखना आवश्यक है या नहीं? यदि आवश्यक है तो क्यों व उससे हमें व सब देखने वालों को क्या लाभ होगा? हम कौन हैं? हममें जो चेतन तत्व अर्थात् जो हम स्वयं है, वह कैसे उत्पन्न होता है? क्या वह अनादि, अनुत्पन्न, नित्य व अविनाशी है या उत्पन्न हुआ व मरण धर्मा है? यदि जीवात्मा उत्पन्न धर्मा व मरण धर्मा है तो हमें किसने व किस प्रयोजन से बनाया है? सश्ष्टि को किस पदार्थ, वस्तु या तूं उंजमतपंस या कारण तत्व से बनाया गया है? क्या यह सश्ष्टि पहली बार बनी है या इससे पूर्व भी बनी है? यदि इससे पूर्व भी बनी है तो उसमें क्या युक्ति व प्रमाण है और यदि पहली बार ही बनी है तो इसमें भी क्या युक्ति व प्रमाण है? मनुष्यों की आकश्ति-शकल-सूरत, लम्बाई, चौड़ाई, आकार-प्रकार व सुन्दरता-असुन्दरता तथा ज्ञान व अज्ञान का भेद क्यों है? क्या हम जो कर्म करते हैं उनका फल हमें भोगना होगा या वह क्षमा हो जायेगें? यदि वह क्षमा होते हैं तो कौन क्षमा करता है व क्यों करता है, उसके नियम क्या हैं एवं कब, कैसे व किसने बनाये हैं? यदि नहीं होते तो क्यों नहीं होते? ऐसे अनेकानेक प्रश्न है जिसके लिए हमें हिन्दी व संस्कश्त का अध ययन तथा साथ में वेद व वैदिक साहित्य का अध्ययन भी करना है। अंग्रेजी व दुनियां की अन्य किसी भी भाषा का अध्ययन करलें, इन व ऐसे प्रश्नों के पूर्ण व सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिलते। **अतः हिन्दी व संस्कश्त का अध्ययन परम आवश्यक हैं।** यह न केवल भारतीय व हिन्दी भाषियों के लिए अपितु दुनियां के सभी लोगों के लिए समान रूप से आवश्यक एवं उपादेय है।

शिक्षा व अध्ययन द्वारा हमें यह भी जानना है कि हमारे जन्म व जीवन का उद्देश्य क्या है अन्यथा शिक्षा अधूरी सिद्ध होगी व जीवन को सन्मार्ग के स्थान पर कुमार्ग पर ले जा सकती है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का जो उद्देश्य है, उसका उत्तर वेद व वैदिक साहित्य में ही मिलता है। **हमारे जीवन का उद्देश्य सदा-सदा के लिए जन्म-मरण के दुःखों से मुक्ति व निवश्त्ति है जो वैदिक शिक्षाओं का पालन यथा, सन्ध्या, यज्ञ, माता-पिता-आचार्य-गुरूजनों-वश्द्धों की सेवा तथा पशु-पक्षियों आदि अन्य जीव-जन्तुओं के प्रति**

मैत्रीभाव रखकर प्राप्त किया जा सकता है। इसके साथ योगाभ्यास व योगसाधना से ईश्वर का साक्षात्कार कर परम सुख व आनन्द की प्राप्ति होती है जो भौतिक पदार्थो से कभी भी प्राप्त नहीं हो सकता है। इसे केवल वेदों के आचार्य व अध्येता ही समझा सकते हैं। संक्षेप में यह जान लेना उचित होगा कि ईश्वर सर्वव्यापक और आनन्दस्वरूप है एवं योग द्वारा उसका सान्निध्य मिल जाने से जीवात्मा के दुर्गण व दुःखादि दूर होकर ईश्वर के गुण आदि के अनुरूप होकर जीवात्मा व मनुष्य के दुःखों की निवश्ति व आनन्द की उपलब्धि होती है। सन्ध्या व ध्यान से ईश्वर का सान्निध्य प्राप्त होने पर ईश्वर का साक्षात्कार होता है और यह जन्म-मरण के दुःखों को दूर कर मुक्ति व मोक्ष प्रदान कराता है। अतः संस्कश्त व हिन्दी के साथ अध्यात्म, वेद एवं वैदिक साहित्य का अध्ययन अति आवश्यक है। इसके साथ ही वह सम्पूर्ण शिक्षा जो अंग्रेजी पद्धति द्वारा दी जाती है, वह भी विद्यार्थियों को मिलनी चाहिये। इसके लिए ही गुरूकुलीय शिक्षा है जहां पुरातन व नवीन सभी विषयों का सम्यक अध्ययन कराया जाये।

गुरूकुलों में बच्चों को दुग्ध-फल व भक्ष्य कोटि का शुद्ध शाकाहारी भोजन कराया जाता है। मांसाहार, मद्य, अण्डा, धूम्रपान आदि व्यसनों का गुरूकुल शिक्षा एवं वैदिक जीवन में सर्वथा निषेध है। ब्रहमचारी व्यायाम करते हैं एवं इसके साथ योगाभ्यास भी करते है। सभी प्रकार की खेल-क्रीडाओं व जूडो-कराटे, सूटिंग आदि का प्रशिक्षण भी दिया जाता है। कलाबाजी या जिमानस्टिक की शिक्षा की भी व्यवस्था की जाती है। इससे बालक का शरीर पुष्ट व बलवान होता है। स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन, बुद्धि व आत्मा हो सकते हैं। अतः गुरूकुल का बालक या ब्रहमचारी बौद्धिक दश्ष्टि से अधिक सक्षम होता है और सभी विषयों को सरलता से ग्रहण कर सकता है। यदि गुरूकुल में रहकर बच्चे कक्षा १२ या इण्टर तक की भी शिक्षा प्राप्त कर लें तो उनकी बुनियाद सुदश्ण हो जाती है और इसके बाद वह आधुनिक शिक्षा के केन्द्रों में अध्ययन कर व्यवसायिक विषयों की शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। देहरादून की पश्चिमी दिशा में पौंधा नामक ग्राम में एक गुरूकुल है जहां बालक व युवक प्राचीन गुरूकुलीय शिक्षा पद्धति से अध्ययन कर रहें हैं। यहां ब्रहमचारी रवीन्द्र तथा ब्रहमचारी अजीत आदि अनेक युवकों ने अध्ययन किया है और सम्प्रति वह सफल जीवन की ओर अग्रसर हैं। श्री रवीन्द्र एक महाविद्यालय में प्रवक्ता हैं। उनका व्यक्तित्व प्राचीन व आधुनिक जीवन पद्धति का सम्मिश्रण है जो अन्यतम है। श्री अजीत भी एक प्रतिभाशाली युवक हैं। वह स्नात्कोत्तर शिक्षा पूरी करने के बाद आगे का अध्ययन कर रहे हैं। बहुत ही ओजस्वी वक्ता हैं एवं भव्य व्यक्तित्व के धनी है। इसके साथ वह स्वाभिमानी हैं एवं आत्म विश्वास के धनी है। ऐसे ही अन्य ब्रहमचारी, विद्यार्थी व युवक गुरूकुल में हैं। आज की आधुनिक व प्राचीन शिक्षा की सभी विशेषताओं को लेकर गुरूकुल को नया स्वरूप प्रदान कर गुरूकुल से इच्छित लाभ प्राप्त किए जा सकते हैं, ऐसा हमारा अनुमान व विश्वास है।

हम देखते हैं कि एक ही विद्यालय के सभी विद्यार्थियों की योग्यता समान नहीं होती। कई बहुत मेधावी व पढ़ाये जाने वाले विषयों को पूरी तरह ग्रहण कर लेते हैं तो बहुत से नहीं कर पाते। अध्ययन में अनेक बातें काम करती हैं। अध्यापकों के गुणी व योग्य होने के साथ स्कूल प्रशासन, बच्चे का स्वयं का पुरूषार्थ, बच्चे के पूर्व जन्म व इस जन्म के संस्कार व इस जन्म की पारिवारिक पश्ष्ठभूमि व परिवेश आदि अनेक कारण होते हैं। ऐसा ही गुरूकुल में भी होता है। आज देश भर में गुरूकुलों की संख्या तो बहुत है परन्तु सरकारी सहायता प्राप्त न होना, साधनों का अभाव, अच्छे भवन, यन्त्र, उपकरण की अपर्याप्त व्यवस्था, शिक्षा व पाठ्य सामग्री की कमी और आचार्यो के उचित वेतन व उनके सम्मान आदि की समुचित व्यवस्था में त्रुटियों के होने के साथ-साथ अनेक गुरूकुल के संचालकों में शिक्षा के प्रति दूरदर्शिता व आधुनिक अच्छी बातों को अपनाने का अभाव जैसी प्रवश्त्तियां भी होती हैं जिससे गुरूकुल के विद्यार्थियों के विकास व उन्नति में कुछ बाधायें आती हैं। यदि आज सरकारी सहायता प्राप्त स्कूलों को गुरूकुल का रूप देते हुए उन्हें आवासीय शिक्षणालय बनाकर वहां प्रातः सायं सन्ध्या, अग्निहोत्र के साथ वैदिक आर्ष व्याकरण व इतर वैदिक आर्ष ग्रन्थों यथा सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, मनुस्मश्ति, उपनिषद्, दर्शन व वेद आदि का अध्ययन अन्य सामान्य गणित, विज्ञान, सामाजिक विज्ञान आदि के साथ कराया जाये तो परिणाम अच्छे हो सकते हैं। हमने अनुभव किया है कि बड़े-बड़े पदों पर प्रतिष्ठित, बहुशिक्षित व पठित व्यक्तियों के जीवन भी अध्यात्म व चारित्रिक दश्ष्टि से अत्यन्त दुर्बल, अपूर्ण व शून्य प्रायः हैं। उनमें प्राचीन वेद कालीन भारतीय संस्कश्ति का न तो यथोचित ज्ञान है और न उसका गौरव। अंग्रेजी के कुछ ग्रन्थों को पढ़कर उसके अन्धभक्त होकर वह स्वयं को विद्वान, अधिकारी व ज्ञानी होने का दम्भ करते हैं। ऐसे लोगों में देश के दुर्बल, अशिक्षित, निर्धन, भोले भाले लोगों के प्रति सहानुभूति व संवेदनाओं का भी अभाव पाया जाता है।

महर्षि दयानन्द ने 'मनुष्य' की परिभाषा की है। वह लिखते हैं कि **'मनुष्य उसी को कहना कि जो मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दुःख और हानि-लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं किन्तु अपने सर्व सामर्थ्य से धर्ममात्माओं की चाहे वे महा अनाथ, निर्बल और गुणरहित क्यों न हों - उनकी रक्षा, उन्नति, प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती, सनाथ, महाबलवान् और गुणवान भी हो तथापि उसका नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करे अर्थात् जहां तक हो सके वहां तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करे। इस काम में चाहे उसको कितना ही दारूण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही जावें, परन्तु इस मनुष्यपनरूप धर्म से पश्थक् कभी न होवे।'** मनुष्य की यह परिभाषा संसार के साहित्य मे अपूर्व है एवं पूरी तरह से स्वामी दयानन्द के जीवन में चरितार्थ हुई देखी जा सकती है। आज इस परिभाषा को अपने जीवनों मे चरितार्थ करने वाले लोगों का अभाव है। ऐसा मनुष्य केवल वैदिक गुरूकुल में ही बन सकता है, स्कूली शिक्षा में इसलिये नहीं कि वहां तो विद्यार्थी का उद्देश्य धनोपार्जन व सुख-सम्पत्ति से युक्त आरामदायक जीवन व्यतीत करना है। राम, कश्ष्ण, पंतजलि, गौतम, कणाद, कपिल, वेदव्यास, शंकर, चाणक्य आदि गुरूकुल शिक्षा पद्धति की ही देन थे और हम यह कह सकते हैं कि उनमें यह परिभाषा ठीक-ठीक व प्रत्यक्ष दश्ष्टिगोचर होती थी। हमारे देश के क्रान्तिकारी चन्द्रशेखर आजाद, रामप्रसाद बिस्मिल, भगत सिंह, सुखदेव, राजगुरू, अशफाक उल्ला खां, रोशन सिंह व लाहिड़ी, खुदीराम बोस, योगी अरविन्द एवं ऐतिहासिक पुरूष वीर शिवाजी, महाराणा प्रताप व गुरू गोविन्द सिंह आदि इस परिभाषा को अपने जीवन में चरितार्थ करते थे। इन महान विभूतियों ने देश, धर्म व संस्कश्ति की रक्षा के लिए जो कष्ट सहे, वह स्वतन्त्र भारत के बड़े से बड़े किसी नेता व व्यक्ति ने नहीं सहे। वस्तुतः इन्होंने भी 'मनुष्य' की परिभाषा को सर्वांश में अपने जीवनों में चरितार्थ किया था। स्वामी श्रद्धानन्द ने महर्षि दयानन्द से प्रेरणा पाकर कांगड़ी, हरिद्वार में सन् १९०२ में जो गुरूकुल खोला था उसका इतिहास भी स्वर्णिम हैं। वहां भी देशभक्त विद्वान, अध्यापक, उपदेशक, वेद भाष्यकार, इतिहासकार, चिकित्सक व वैद्य, पत्रकार व स्वतन्त्रता सेनानी उत्पन्न हुएं जिन्होंने वेदों के आधार पर महर्षि दयानन्द द्वारा दी गई परिभाषा को अपने जीवन में चरितार्थ किया था। हमें विश्वास है कि भविष्य में गुरूकुल शिक्षा पद्धति श्रेष्ठ सिद्ध होगी और सारी दुनियां में शिक्षा के सभी उद्देश्यों को पूरा करने के कारण इसे अपनाया जायेगा।

'ईश्वर साक्षात्कार के लक्ष्य की प्राप्ती के लिए मत-मतान्तरों की भिन्न उपासना पद्धतियों के एकीकरण की आवश्यकता'

–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

हम ईश्वर को मानते हैं और हमें आस्तिक कहा जाता है। संसार के अधिकांश मत व सम्प्रदाय, सनातन धर्मी, जरदुश्त व पारसी, ईसाई, इस्लाम आदि ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास रखते हैं। ईश्वर के सम्बन्ध में सभी मतों के बहुत से विचार एवं मान्यतायें परस्पर भिन्न व प्रतिकूल भी हैं। यह तो तर्क व प्रमाणों से सिद्ध है कि समस्त ब्रह्माण्ड में ईश्वर की केवल एक ही सत्ता है जिसने इसे बनाया है। सभी मत मतान्तरों ने उस ईश्वर को भिन्न-भिन्न नाम दे दिये। अपनी-अपनी ज्ञान व क्षमता के अनुसार उसके प्रवर्तकों ने उस सत्ता अर्थात् ईश्वर का स्वरूप भी निर्धारित किया है, परन्तु क्या वह ईश्वर वैसा ही है जैसा उन्होंने निर्धारित या घोषित किया है? ऐसा सम्भव ही नहीं है कि उनके द्वारा निधारित सभी बातें, विचार या मान्यतायें जो परस्पर विरूद्ध हैं, सत्य ही हों। अतः ईश्वर एक होने से उसका स्वरूप भी एक समान व अविरूद्ध ही होना चाहिये। यदि उनमें अन्तर है तो यह स्पष्ट है कि उनकी परस्पर विरोधी सभी बातें गलत व असत्य हैं या उनमें से केवल एक ही सत्य है। उस सत्य व ईश्वर के यथार्थ स्वरूप व सत्य गुणों को सभी को जानना व मानना चाहिये और अपनी उस, अनुसंधान, विचार, चिन्तन, ऊहापोह, स्वाध्याय, अध्ययन, वार्तालाप, तर्क-वितर्क से सिद्ध को मानना व मनवाना चाहिये व उस सत्य के विपरीत असत्य मान्यताओं का त्याग करना, छोड़ना व छुड़वाना चाहिये। यही बुद्धि का उपयोग एवं मनुष्यता है। असत्य बातों को मानते रहना और उसमें सुधार न करना मनुष्यता नहीं है। मनुष्य की कहते ही उसे हैं कि जो मननशील होकर स्वात्मवत्, अर्थात् अपने समान, अन्यों के सुख-दुःख व हानि लाभ को समझे वा माने। अन्यायकारी बलवान से भी न डरे और धर्मात्मा जो निर्बल हैं, भले ही वह ज्ञानहीन व बलहीन ही क्यों न हों, उनसे डरता रहे और उनकी रक्षा, मान, सेवा व सहायता करे। इतना ही नहीं अपितु अपनी पूर्ण सामर्थ्य से अन्यायकारियों के बल की हानि व न्यायकारियों के बल की वश्द्धि करें। इस कार्य में उस धर्मसेवी मनुष्य को कितना ही दारूण दुःख क्यों न प्राप्त हो, प्राण भी भले ही चले जायें, परन्तु इस मानवता रूप धर्म से पश्थक वह व अन्य कभी न होवें। यद्यपि वेदों के आधार पर महर्षि दयानन्द द्वारा की गई यह एक आदर्श मनुष्य की परिभाषा है परन्तु इस पर खरा उतरने वाला संसार मे शायद ही कहीं कोई हो।

मनुष्य को मननशील होना चाहिये। ईश्वर को भी विचार का विषय बनाना चाहिये। मुख्यतः इन प्रश्नों पर विचार करना चाहिये कि क्या ईश्वर सत्य है, उसकी सत्ता है या नहीं? वह शरीरधारी है अथवा शरीररहित व आकाररहित है, ज्ञानी है अथवा अज्ञानी, अल्पशक्तिमान है या सर्वशक्तिमान, उसकी शक्ति की सीमायें या मर्यादायें क्या हैं? वह सर्वव्यापक व निराकार है या एकदेशी आदि आदि। इन प्रश्नों पर जब वह चिन्तन करेगा तो उसे ज्ञात होगा कि ईश्वर सत्य, चित्त, आनन्दस्वरूप, सर्वशक्तिमान, निराकार, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वान्तरयामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र एवं सश्ष्टिकर्ता है और वही एकमात्र उपासनीय देव, देवता, ईश्वर या परमात्मा है। ईश्वर के अतिरिक्त स्वयं के बारे में भी चिन्तन करना चाहिये व प्रयास करना चाहिये कि हमारा स्वरूप कैसा है और प्रकश्ति व सश्ष्टि के गुण क्या है व उसके उपयोग क्या हैं? हम समझते हैं कि जब इन प्रश्नों पर विचार किया जायेगा तो जो तर्क व प्रमाणों से सिद्ध उत्तर होगा वह संसार के सभी लोगों का एक जैसा ही होगा। उसमें भिन्नता किंचित भी न होगी। और यदि ऐसा हो जाये तो फिर नाना प्रकार के मत-मतान्तर समाप्त होकर एक मनुष्य धर्म या मानव धर्म बचेगा जिससे मानवता का कल्याण होगा। ईश्वर व जीवात्मा का स्वरूप निर्धारित हो जाने पर मनुष्य का धर्म निर्धारित करना सरल व सुगम हो जाता है। यही सत्य के मानने वाले लोगों का अन्तिम लक्ष्य व उद्देश्य है। ईश्वर द्वारा वेद में मनुष्यों को ऐसा ही करने की आज्ञा है। सश्ष्टि के आरम्भ से महर्षि दयानन्द के समय तक और उनके बाद भी वेद मनीषियों द्वारा ऐसे प्रयत्न जारी हैं। बीच में महाभारत युद्ध के कारण इसमें व्यवधान अवश्य आया था जिसे महर्षि दयानन्द ने अपने अपूर्व ज्ञान व क्षमता से दूर किया। आज हमें ईश्वर, जीवात्मा व सश्ष्टि के विषय में सत्य ज्ञान उपलब्ध है जो केवल किसी संस्था विशेष या भारत देश मात्र के लिए नहीं अपितु सारी दुनिया व ससार के प्रत्येक व्यक्ति के लिए समान रूप से जानने व मानने योग्य है।

हमने पूर्व लिखा है कि संसार के अधिकांश मत-मतान्तर की मान्यताओं के अनुसार उनके अनुयायी ईश्वर व दैवीय शक्ति की सत्ता को मानते हैं जिससे यह संसार सहित हम भी उत्पन्न हुए हैं और उसी सत्ता से यह संसार चल रहा है। यह भी सब मानते हैं कि उस शक्ति के प्रति हमें अपने कर्तव्य पूरे करने हैं जो उसकी भक्ति व उपासना के द्वारा ही हो सकता है। उपासना से ही स्तुति व प्रार्थना भी जुड़ी हुई है। यदि स्तुति व प्रार्थना नहीं होगी तो उपासना हो ही नही सकती। सभी मतों में किसी न किसी प्रकार से स्तुति, प्रार्थना व उपासना की जाती है परन्तु सबके करने की विधियां अलग-अलग हैं। इन अलग विधियों के कारण ही विवाद होता है। प्रायः सभी व कुछ की यह धारणायें हैं कि इतर अन्य सभी मतावलम्बी उनकी पद्धति से उपासना व धार्मिक मान्यताओं का आचरण व पालन करें इसलिए वह धर्मान्तरण आदि कार्य करते हैं। अतः ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना में हमें ईश्वर को क्या-क्या किस प्रकार से कहना है व उसकी उपासना किस विधि से अच्छी व सर्वांगपूर्ण हो सकती है, इसके लिए यदि सभी मतों के लोग परस्पर प्रेम व सदभाव से बैठकर विचार करें तो इसका हल निकाला जा सकता है। इसके लिए सभी मतावलम्बियों में सत्य को स्वीकार करने का जज्बा होना चाहिये जो कि सम्प्रति किसी मे दिखता नहीं है। जो-जो मतावलम्बीजन अपना मत, मान्यतायें व उपासना पद्धति दूसरों से मनवाना चाहिते हैं वह वैचारिक आधार पर स्वमत को सर्वोत्तम, सर्वोत्कश्ष्ट व लक्ष्य प्राप्ति में समर्थ सिद्ध कर नहीं पाते, अतः उन्हें इसके लिए अन्य मतावलम्बियों पर बल प्रयोग के साथ प्रलोभन

देते हैं या फिर छद्म रूप से प्रचार कर भोले भाले लोगों को फंसाते हैं। इतिहास में हमने इसका साक्षात दर्शन किया है और आजकल भी लुक-छिप कर नाना प्रकार से यह कार्य किया जा रहा है।

ईश्वर का स्वरूप कैसा है इसका उल्लेख पूर्व की पंक्तियों में किया जा चुका है। इस पर सभी मतों के लोग एक साथ बैठ कर विस्तार से चिन्तन कर ईश्वर का सत्य स्वरूप निर्धारित कर सकते हैं। इसी प्रकार से आत्मा का स्वरूप भी निर्धारित किया जा सकता है। हमने चिन्तन व स्वाध्याय द्वारा यह जाना है कि मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट, पतंग, सर्प आदि योनियों में जीवात्मा का स्वरूप एक ही है अर्थात् सबका जीवात्मा समान है। यह जीवात्मा सत्य, चेतन, आनन्द से रहित है तथा सुख व आनन्द के लिए अग्रसर है। सभी मनुष्यों, पशु, पक्षी आदि की सब क्रियायें व अच्छे बुरे कर्म सुख व आनन्द की प्राप्ति के लिए ही होते हैं। यह जीवात्मा एकदेशी, आकार रहित, अत्यन्त सूक्ष्म, मनुष्य योनि में कर्मों का कर्ता व कर्मो के फलों यथा सुख व दुखों का भोक्ता है। इस जन्म में इसे पूर्व जन्मों के अवशिष्ट कर्मो का फल भी भोगना होता है। इस कारण कई लोग कर्म फल सिद्धान्त को समझ नहीं पाते। हमने जो पूर्व जन्मों में कर्म किए हैं परन्तु फल अभी नही भोगा है उनके फलों को वर्तमान व भावी जीवन में अवश्यमेव भोगना होगा। इसलिए ऐसा भी हो सकता है कि बुरे कर्म व पाप करने वाला व्यक्ति सुखी हो सकता है और कोई अच्छे व पुण्य कर्मों को करने वाला दुःखी हो सकता है, परन्तु बुरे व्यक्ति के सुख व अच्छे व्यक्ति के दुःख का एक प्रमुख कारण पूर्व जन्मों के जमा या अवशिष्ट कर्म हुआ करते हैं। जीवात्मा को ईश्वर के द्वारा उसके कर्म, पाप-पुण्य व प्रारब्ध के अनुसार अगले व पुनर्जन्म में मनुष्य व पशु आदि योनियां, आयु व सुख-दुख मिलते हैं। प्रत्येक जन्मधारी की मश्त्यु अवश्य होती है और मश्त्यु के बाद जन्म अर्थात् पुनर्जन्म होना भी अवश्यम्भावी है। मनुष्य का मनुष्य या पशु पक्षी आदि के रूप में जो जन्म होता है वह कर्मो के बन्धन के कारण होता है। यदि हम सभी कर्मो के फलों को भोग लें, वर्तमान व आगे कोई बुरा कर्म करें ही न, सभी अच्छे-अच्छे कर्म करें और उपासना द्वारा ईश्वर को जानकर उसका साक्षात्कार कर लें तो जन्म-मरण से छुट्टी मिल जाती है और जीवात्मा मोक्ष को प्राप्त कर लेता है जिस प्रकार कि जेल में बन्द व्यक्ति की सजा पूरी होने और उस बीच कोई नया अपराध न करने पर जेल से मुक्ति हो जाता है। इस प्रकार आत्मा के बारे में जाना जा सकता है और इसी प्रकार सश्ष्टि व प्रकश्ति के बारे में शास्त्रों के अध्ययन, चिन्तन, मनन व प्रयोगों द्वारा परमाणु व उससे पूर्व की अवस्था तक भी पहुंचा जा सकता है। स्वाध याय, विचार व चिन्तन से सश्ष्टि से पूर्व की अवस्था प्रलय में प्रकश्ति किस रूप में थी, उसका भी पर्याप्त ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रकार से वेद, वैदिक साहित्य, उपनिषद्, दर्शन व ऋषि-मुनियों, विद्वानों, ज्ञानियों आदि के सत्य ज्ञान युक्त ग्रन्थों को पढ़कर व जीवित विद्वान मनीषियों से शंका समाध ाान कर भी ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। यह सब कुछ पूरा हो जाने पर ईश्वर की उपासना को करके जीवन के उद्देश्य के अनुरूप उचित व करणीय कर्मो व साधना को करते हुए हम बन्धनों से छूटते हैं।

अब सच्ची ईश्वर उपासना की विधि पर विचार करते है। हम समझते है। पौराणिको के मूर्ति पूजा आदि कार्य, ईसाईयों द्वारा चर्च में प्रार्थना आदि अनुष्ठान एवं मुसलमानों द्वारा नमाज अता करना आदि स्तुति, प्रार्थना व उपासना के ही अन्तर्गत आते हैं। ईश्वर, गाड व खुदा सर्वव्यापक व सर्वातिसूक्ष्म होने से आत्मा व संसार के भीतर विद्यमान है। अतः उपासना अर्थात् उसकी निकटता के लिए कहीं जाना नहीं है। ईश्वर की उपासना तो उसकी हर पल व हर क्षण हमें प्राप्त है। हमें मात्र अपना कर्तव्य पूरा करना है और सावधान होकर शुद्ध मन से उसके गुणों व उपकारो का विचार, चिन्तन व वर्णन, उससे प्रार्थना अर्थात् वह ध्यान व उपासना में हमारी सहायता करे और हम उसका साक्षात्कार कर सकें, आदि बौद्धिक कर्म करने हैं। हम विज्ञान के नियम के अनुसार जानते हैं कि लौह की तार आदि सुचालक हववक बवदकनबजवत में ही विद्युत का प्रवाह होता है, सूखी लकड़ी आदि कुचालक इंक बवदकनबजवत में नहीं। इसी प्रकार से हमें स्वयं को ईश्वर का सुचालक बनाना होगा। इसके लिए हमें अपने गुण, कर्म व स्वभाव को ईश्वर के गुण, कर्म व स्वभावों के अनुरूप बनाना होगा। जब यह हो जायेगा और स्थिरासन में बैठकर भली प्रकार से हम उपासना अर्थात् इसका ध्यान कर रहे होगें और स्तुति व प्रार्थना चल रही होगी, उसमें डूब जायेंगे और केवल ईश्वर ही हमारे ध्यान में होगा, संसार व उसकी वस्तुओं व व्यवहारों से हम पूर्णतः रूके हुए होगें व उनका सम्बन्ध पूर्णतः अवरूद्ध होगा तो देर या सबेर ऐसी स्थिति आयेगी कि हमें ईश्वर की साक्षात् अनुभूति होगी और उसका साक्षात्कार होगा। इस साक्षात्कार की स्थिति में हश्दय की सभी गांठें खुल जाती है और साधक व उपासक निःशंक हो जाता है। जब तक निःशंक नहीं हुआ साधना जारी रखनी है। निःशंक हो जाने के बाद भी उस स्थिति को जारी रखने के लिए साधना व उपासना करना आवश्यक होता है। यह स्थिति प्राप्त हो जाने पर आत्मा के दुःख व कष्टों का निवारण हो जाता है और मनुष्य सुख-शान्ति-आनन्द की स्थिति को प्राप्त कर लेता है। इसके बाद संसार में कुछ भी प्राप्त करने के लिए नहीं रहता। यही वह चीज व स्थिति है जो प्राप्तव्य है और जिसके लिए हमें मनुष्य जन्म परमात्मा के द्वारा मिला हुआ है। इससे यह ज्ञात हुआ कि उपासना के लिए यम, नियमों का पालन, आसनों की सफलता, प्राणायाम का अभ्यास जो मन को स्थिर करने के लिए किया जाता है, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान व समाधि का अभ्यास, पालन व आचरण आवश्यक है। यह प्रत्येक मनुष्य के लिए आवश्यक है तथा इसमें किसी मत व सम्प्रदाय के कारण कोई भेद या अन्तर नहीं आता। अर्थात् एक ही ईश्वर संसार के सभी मनुष्यों के लिए उपासनीय है और उसकी विधि भी हमारी निजी दश्ष्टि में एक ही हो सकती है, अलग विधि से करने पर परिणाम अलग होगें, अनेक विधियों से उपासना करने पर एक परिणाम अर्थात् ईश्वर की उपलब्धि या प्राप्ति नहीं हो सकती।

ईश्वर की प्राप्ति उपासना, ध्यान व समाधि आदि से होती है। भोजन का उपासना से गहरा सम्बन्ध है। उपासक को शुद्ध शाकाहारी भोजन करने से लाभ मिलता है और सामिष भोजन करने से उपासना में सफलता नहीं मिलती। उपासक के लिए मांसाहार, मदिरापान, ध्रूमपान व अण्डों आदि का सेवन व ब्रह्मचर्य पालन में अनियमितता हानिकारक होती है। जो लोग या मतों के अनुयायी इन अभक्ष्य पदार्थो का सेवन करते हैं वह उपासना से अधिक लाभ नहीं उठा सकते, न उन्हें लक्ष्य ही प्राप्त हो सकता है। इनका सेवन पुण्य कर्म न होकर पाप कर्म की श्रेणी में आता है। इससे स्वयं को भी हानि, स्वभाव का हिंसक होना व मलिन बुद्धि का होना, होता है और पशुओं आदि का जीवन भी संकट में पड़ता है। पशुओं की उत्पत्ति ईश्वर ने भिन्न प्रयोजनों के लिए की है। उस प्रयोजन को पूरा न होने देना व उसमें बाधा डालने से लोग ईश्वरीय दण्ड के भागी बनते हैं। अण्डों के सेवन से भी ऐसा ही होता है। ध्रूमपान से हमारे शरीर के अन्दर फेफड़ों आदि को हानि पहुंचती है। श्वास की सामान्य प्रक्रिया बाधित होती है, उसका प्रयोजन सिद्ध नहीं होता और वायुमण्डल के प्रदुषण से अन्य व्यक्तियों के श्वांस में भी बाधा आती है, कैंसर आदि रोग भी होते हैं। प्राण वायु के प्रदुषण का निमित्त ध्रूमपान वाला व्यक्ति होने से वह ईश्वरीय दण्ड का भागी होता है। अतः उपासक, ध्यानी व ईश्वर भक्त को कदापि इनका सेवन नहीं करना चाहिये। इसके स्थान पर भक्ष्य पदार्थो का ही सेवन करना चाहिये जिसका उल्लेख महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में भक्ष्याभक्ष्य प्रकरण में सविस्तार किया है। यह सिद्ध नहीं किया जा सकता कि आज तक किसी मांसाहारी व सामिष भोजी को ईश्वर के दर्शन व साक्षात्कार हुआ हो? हां यह तो बताया जा सकता है कि शुद्ध शाकाहारी भोजन करने वालों को ईश्वर का साक्षात्कार हुआ है। महर्षि दयानन्द का उदाहरण हमारे सामने हैं। महर्षि पतंजलि जिन्होंने योग दर्शन ग्रन्थ का प्रणयन किया है वह भी ईश्वर साक्षात्कार को प्राप्त ऋषि व योगी थे, ऐसे अनेक उदाहरण हैं।

(शेष पृष्ठ १० पर)

'वेद प्रचार एवं उपदेषकों का सफल सफल उपासक होना आवष्यक'

–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना वेदों के प्रचार व प्रसार के लिए की थी और यही आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य भी है। वेदों के प्रचार व प्रसार के पीछे महर्षि दयानन्द का मुख्य उद्देश्य यही था कि वेद ईश्वर से उत्पन्न व प्रेरित सब सत्य विद्याओं की ज्ञान की पुस्तक हैं। महर्षि दयानन्द ने जब वेदों का अध्ययन किया तो उन्हें लगा कि संसार में जितने भी धार्मिक मत, पन्थ, संगठन, संस्थायें, मजहब, रिलीजीयन आदि हैं वह सब जनता के साथ न्याय नहीं कर रहे हैं। सभी मत-मतान्तरों में ईश्वर, जीव व प्रकशति के स्वरूप के बारे में जो विवरण मिलता है वह पूर्ण रूप से यथार्थ व सत्य नहीं है। सत्य मत व सिद्धान्तों के स्थान पर उनमें अज्ञान, असत्य काल्पनिक मान्यताओं व सिद्धान्तों का मिश्रण भी है। उन्हें इस तथ्य का ज्ञान भी हुआ कि यदि वह सत्य का प्रचार नहीं करेगें तो जितने भी मनुष्य संसार में हैं, वह मानव जीवन के यथार्थ उद्देश्य से अपरिचित रहने के कारण अपने दुर्लभ मानव जीवन को व्यर्थ गवां कर परजन्म में पुनः गहरे बन्धनों में फंस जायेगें जिससे दुःखों की प्राप्ति के कारण उनकी दुर्गति होना निश्चित है। संसार के सब मनुष्यों कों दुःखों से बचाने एवं उनके कल्याण के लिए ही उन्होंने वेदों के प्रचार के कार्य को चुना। यह संसार के लोगों का दुर्भाग्य ही कहा जायेगा कि वह महर्षि दयानन्द की सर्वहितकारी व यथार्थ मंशा को समझ नहीं पाये या अज्ञानता व स्वार्थवश समझना नहीं चाहा और अपने साथ-साथ सारी मानव जाति के जीवन को अवनति के गर्त की ओर ढकेल दिया। अपने स्वाध्याय, विचार व चिन्तन-मनन से हमने इस तथ्य को जाना है कि वेदों का ज्ञान संसार के सभी धर्म व मत के ग्रन्थों से सर्वोच्च, सर्वोत्तम, सर्वहितकारी, ईश्वरप्रदत्त व सारी दुनियां के सभी मनुष्यों के लिए परम हितकारी है। इस वैदिक धर्म अथवा वेदों की शिक्षा को जानकर उसका आचरण करने से मनुष्य जीवन के उद्देश्य व लक्ष्य ''धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष'' की प्राप्ति कर सफलता प्राप्त कर सकता है। वेदों की महानता को जानने के लिए और जीवन के उद्देश्य एवं लक्ष्य धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को प्राप्त, सफल व सिद्ध करने का सबसे सरल व सुगम मार्ग महर्षि दयानन्द के प्रसिद्ध ग्रन्थ ''सत्यार्थ प्रकाश'' का निष्पक्ष व किसी भी मत-मतान्तर के आग्रह से रहित होकर अध्ययन करना है।

यह जान लेने के बाद वेदों व वैदिक मान्यताओं के प्रचार प्रसार का प्रयत्न आवश्यक हो जाता है। इसके लिए हमें ऐसे ज्ञानी विद्वानों की आवश्यकता है जो वेदों के विद्वान होने के साथ-साथ अन्य मत-पन्थों का भी पर्याप्त ज्ञान रखते हों। हमारे गुरूकुल ऐसे विद्वानों को तैयार करने की भावना से ही खोले गये थे परन्तु इनसे उद्देश्यानुसार लाभ प्राप्त नहीं हो सका। आज आवश्यकता गुरूकुल प्रणाली में देश, काल, परिस्थितियों के अनुसार कमियों को दूर करने की है। गुरूकुल का आर्य समाज की पश्ष्ठभूमि में मुख्य उद्देश्य केवल व केवल वेदाध्ययन व अन्य मत की पुस्तकों का अध्ययन कराकर उन विद्या स्नातकों को वेदों के महत्व से स्वदेश को ही नहीं अपितु संसार को प्रकाशित करना व जानकारी देना है। इसके साथ ही मत-मतान्तरों की त्रुटियों व अज्ञानमूलक मान्यताओं व सिद्धान्तों का प्रकाश करना भी उनका उद्देश्य है जिससे लोग सत्य व असत्य का निर्णय स्वयं कर सकें। इसके लिए आज की आवश्यकता के अनुरूप हिन्दी, अंग्रेजी सहित दुनियां की प्रमुख भाषाओं में उच्च स्तरीय साहित्य तैयार कर जन-जन तक पहुंचाना होगा। दूसरी लड़ाई यह भी लड़नी पड़ सकती है कि सत्य के प्रचार के मार्ग में नाना प्रकार की बाधायें आयेगीं। अज्ञानी स्वार्थी लोग सत्य के विरोधी होते हैं। उन्हें सत्य से कोई लेना देना नहीं होता। उन्हें तो अपना स्वार्थ ही प्रिय होता है। उनका सामना व मुकाबला भी आर्य समाज के संगठन को करना होगा लगभग वैसे ही जैसे स्वामी दयानन्द, पं. लेखराम, स्वामी श्रद्धानन्द आदि ने किया व अन्ततः अपने प्राणों की आहुति देकर वैदिक धर्म पर शहीद हो गये और हकीकत राय की तरह बलिदान की परम्परा को जन्म देकर उसका निर्वाह किया। हमें यह भी देखना होगा कि हमारे संगठन में भी कुछ लोग किन्हीं महत्वकांक्षाओं के कारण आर्य समाज के विरोधियों को सहयोग कर समाज के संगठन को कमजोर तो नही कर रहे हैं? ऐसे लोगों का पता लगाना और उन्हें आर्य समाज से पश्थक करना होगा। आर्य समाज में शीर्ष स्थानों पर बैठे लोग पूरी तरह समर्पित वैदिक धर्मी, सत्यप्रेमी व पक्के आर्य समाजी होने चाहिये। केवल बड़ी-बड़ी बातें व प्रभावशाली व्याख्यान देने मात्र से ही कोई व्यक्ति महर्षि दयानन्द, वैदिक धर्म व आर्य समाज का पक्का अनुयायी नहीं हो जाता। अतः इस ओर भी सावधानी रखने की आवश्यकता है।

आर्य समाज कोई मत-मतान्तर नहीं है अपितु यह सत्य ज्ञान से युक्त वेदों के मानव सर्वहितकारी विचारों, मान्यताओं व सिद्धान्तों का प्रचार करने वाली एक मिशनरी संस्था है जिससे मनुष्यमात्र सहित प्राणीमात्र का हित व कल्याण होता है। आर्य समाज सभी मतों व पन्थों से भिन्न एक सर्वोत्कश्ष्ट संगठन एवं आन्दोलन है जो संसार से सभी बुराईयों को दूर कर श्रेष्ठता को स्थापित करने की भावना से ओतप्रोत है। इसका लक्ष्य बहुत बड़ा व महान है। इसके पूर्ण होने में अनेकों वर्ष, शताब्दियां व युग भी लग सकते हैं। यदि सभी आर्यबन्धु संगठित होकर कार्य करेगें तो उसका प्रभाव तो देश व समाज पर अवश्यमेव होगा ही। अतः इस भावना को रखकर हमें अपने गुरूकुल के ब्रह्मचारियो का उद्देश्य उन्हें शिक्षित कर यत्र-तत्र धनोपार्जन हेतु नौकरी करवाने का न होकर धर्मरक्षा व धर्मप्रचार के कार्य में लगाने का होना चाहिये। यदि आवश्यक हो तो इस कार्य के लिए आर्य समाजें अपने कोष से उन्हें आज की आवश्यकता के अनुसार दक्षिणा या आवश्यकता की पूर्ति करने वाला उचित वेतन भी दे सकती हैं। हमें लगता है कि हमारे समाज व सभायें इस विषय में उदासीन हैं जो कि प्रचार में सफलता प्राप्त न होने का एक कारण हो सकता है। हम यहां यह उदाहरण देना चाहते हैं कि यदि एक गुरूकुल के योग्य ब्रह्मचारी को हम उचित वेतन या दक्षिणा देकर वेद प्रचार के कार्य पर नियुक्त नहीं करेगें तो उसे आजीविका के लिए अन्यत्र नौकरी करनी होगी। कई परिस्थितियों मे अन्य मतावलम्बियों के यहां भी कार्य या नौकरी करनी पड़ सकती है। क्या उन सभी स्थितियों में वह आर्य समाज व वैदिक धर्म की सेवा कर पायेगा जो वह आर्य समाज से वेतन लेकर कर सकता था? हमे लगता है कि हमें अपने योग्यतम गुरूकुल के ब्रह्मचारियो को आर्य समाज से बाहर आजीविका के लिए न जाने देकर उन्हें उचित वेतन व सुविधायें देनी चाहियें और उनसे उपयुक्त कार्य लेना चाहिये जिससे वेद प्रचार का अधिकाधिक कार्य हो सके।

आजकल हम देखते हैं कि आर्य समाज के साधारण कार्यकर्ताओं से लेकर बड़े-बड़े विद्वानों में ईश्वर प्राप्ति के लिए आवश्यक साधना का अभाव है। हम आर्य समाज में ऐसे लोग तैयार नहीं कर सके जिनके परिचय में दूसरों को बता सके कि हमारे यह विद्वान ईश्वर का साक्षात्कार किए हुए हैं? क्या कार्यकर्ता, क्या विद्वान, नेता, संन्यासी, अपवाद को छोड़कर, सभी साधना मे कोरे हैं। यदि यह विचार करें कि महर्षि दयानन्द ने सन्ध्योपासना की विधि ा किस प्रयोजन से लिखी थी तो हम पाते हैं कि वह स्वयं साधना में शिखर पर पहुंचें हुए सिद्ध साधक, योगी, उपासक व भक्त थे। उन्होंने अवश्य ही ईश्वर का साक्षात्कार किया हुआ था। तभी वह वेदों का ऐसा अत्युत्तम भाष्य कर सके व सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, संस्कार विधि, आर्याभिविनय, गोकरूणानिधि, व्यहारभानू आदि ग्रन्थो का प्रणयन कर सके। सन्ध्या में ईश्वर के ध्यान करते हुए जो विचार, चिन्तन व ध्यान किया जाता है उसकी विधि ा व उसकी तैयारी करने का उपक्रम उन्होंने बताया है। उन्होंने अपने साहित्य में ईश्वर को प्राप्त करने के जो विचार प्रस्तुत किए हैं, उसका उद्देश्य ही

सभी आर्यो व इतर सभी मतस्थ व वर्णस्थ मनुष्यों को उपासना में प्रवश्त्त कर उन्हें ईश्वर का साक्षात्कार कराना था। यह हम सबका दुर्भाग्य ही कहा जायेगा कि हम प्रवचन व उपदेश तो खूब देते हैं, तालियां भी बजती हैं, परन्तु उपदेश देने वाला आयु व ज्ञान वश्द्ध होने पर भी ईश्वर का साक्षात्कार किया हुआ नहीं होता है। हमें लगता है कि सभी प्रचारकों, उपदेशकों व व्याख्यानताओं को ध्यान द्वारा समाधि को सिद्ध करने का अधिकाधिक प्रयास करना चाहिये और श्रोताओं सहित सभी के सामने एक उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिये। यदि ऐसा होगा तो प्रचार का प्रभाव न केवल देश में अपितु विश्व में भी अधिक होगा। हम विद्वानों पर छोड़ते हैं कि वह इस सम्बन्ध में और विचार कर अपने लेखों से आर्य जनता का मार्गदर्शन करें। अपने इन विचारों को हम छोटा मुंह बड़ी मानते हैं, परन्तु आवश्यकता, उपयोगिता व सद्भावना से यह वाक्य लिखें हैं।

वेद प्रचार क्या है? हमें लगता है कि इस पर भी विचार करना प्रासंगिक है। हम आर्य समाज मन्दिर में किसी विद्वान का प्रवचन कराने को ही वेद प्रचार मानने लगे हैं, जो कि वेद प्रचार का अति सीमित व सकुंचित अर्थ है। प्रकाश की आवश्यकता वहां होती है जहां अन्धकार होता है। घर में हम प्रकाश तब करते हैं जब सांय या रात्रि समय में अन्धकार आ घेरता है अथवा जब घर मे रखी वस्तुएं स्पष्ट रूप में दिखाई नहीं देतीं। वेद प्रचार भी वेदों का प्रकाश करने को कहते हैं और यह वहां करना होता है जहां लोग वेदो से अपरिचित, अनभिज्ञ, अज्ञान व अन्धविश्वासों से आवश्त्त, अशिक्षा, अभाव व निर्धनता आदि से ग्रसित हैं तथा धर्म व अधर्म, ईश्वर व जीवात्मा के स्वरूप आदि को भली प्रकार से नहीं जानते। जो लोग वेद से परिचित हैं, स्वाध्यायशील हैं व नियमित आर्य समाज में आते-जाते रहते हैं, वहां जो प्रवचन, व्याख्यान व अन्य कार्यक्रम होते हैं वह वेद प्रचार न होकर एक प्रकार से परम्परा का निर्वाह मात्र होते हैं एवं उनकी आवश्यकता एवं उपयोगिता भी निर्विवाद है। अतः हमारे सभी विद्वान, उपदेशकों व प्रचारकों को ऐसे स्थान तलाश करने चाहियें जहां वेदेतर पुस्तकों, मत, पन्थों व मजहबों का प्रचार हैं। वहां हमारे समर्थ व आर्थिक स्थिति से स्वाधीन विद्वानों को स्वयं के व्यय से जाकर मौखिक व साहित्य वितरित कर प्रचार करना चाहिये। इसके लिए वह स्थानीय इष्ट स्थान का चुनाव कर सकते है व समान विचारधारा के कुछ लोगो को साथ लेकर उस स्थानीय व अन्य स्थानों पर अपने दल के साथ जाकर सभा आदि कर वहां वेदों व वेदानुसार सन्ध्या, हवन व अन्य कर्तव्यों के बारे में बता सकते हैं और साथ ही उन्हें आगाह कर सकते हैं कि कैसे-कैसे लोग उनका मत बदलने के लिए वहां आकर उन्हें प्रलोभन, डर व अन्य प्रकार से उनका धर्म व मत परिवर्तन करने की योजनायें बनायें हुए हैं। अशिक्षित व धार्मिक दश्ष्टि से अज्ञानी लोगों को सावधान करना भी वेद प्रचार के अन्तर्गत है। जहां भी धर्म परिवर्तन वाले अपनी गतिविधियों को केन्द्रित किए हुए हों, वहां किसी आर्य समाज के द्वारा जाकर प्रत्येक व्यक्ति को सावधान कर उन्हें वेद के महत्व को बताना चाहिये। यदि ऐसा नही करेगें तो हमें लगता है आने वाले कुछ वर्षों में हमारे विरोधियों के प्रचार के कारण उनकी संख्या बढ़ जायेगी और वैदिक धर्मियों की संख्या घटेगी। उस स्थिति में हमारे लिए आर्य समाजों में भी उपदेश करने की आवश्यकता स्यात् समाप्त ही हो जायेगी। इस विषय में आर्य समाज में सशक्त व प्रभावशाली योजना का अभाव दश्ष्टिगोचर होता है।

हम ईश्वरोपासना, सन्ध्या व साधना को कम महत्व क्यों देते हैं यह प्रश्न भी विचारणीय है। इसमें हमें लगता है कि हमारे पूर्व जन्मों के संस्कार, हमारी वर्तमान शिक्षा, सामाजिक संरचना, समाज का वातावरण, हमारी महत्वाकांक्षायें, अति व्यवस्त जीवन, समयाभाव , समाजिक व्यवस्था आदि अनेक कारण हैं। हमें शायद यह डर भी होता है कि यदि हम सन्ध्या करें और उसमें सफलता मिल जाये तो फिर हम इस समाज में एक भिन्न प्रकार के व्यक्ति बन जायेगें, समाज से अलग-थलग हो जायेंगे, जो कि शायद हम होना नहीं चाहते। सन्ध्या को सफल करने के लिए हमें आध्यात्मिक ग्रन्थों का स्वाध्याय करना होगा। स्वाध्याय से हम ईश्वर के स्वरूप, सन्ध्या की विधियों व ध्यान करना जान सकेगें। इसके बाद अभ्यास करना शेष रहता है। यम, नियमों, प्राणायाम आदि का निरन्तर स्वाध्याय व सन्ध्या व ध्यान के अभ्यास से हम आगे बढ़ेगें और उपासना के लक्ष्य को प्राप्त हो सकेगें ऐसा होना सम्भव है और इसमें शास्त्रों व हमारे ऋषियों आदि की भी साक्षी है। हम समझते हैं कि एक सच्चा साधक समाज में अधिक सम्मानित, सफल व सुखी जीवन व्यतीत कर सकता है। हम चाहते हैं कि वेद प्रचार की पश्ष्ठ भूमि में पाठक इस लेख विचार कर निर्णय करें।

(पृष्ठ ८का शेष) हम जब सभी मत-मतान्तरों पर दश्ष्टि डालते हैं तो हमें ईश्वर के मानने वाले व उपासकों की कई श्रेणियां दिखाई देती हैं। एक ऐसी है जो परम्परा के अनुसार ईश्वर को मानते हैं और अपने मत के विधान के अनुसार पूजा उपासना करते हैं। उन्हें इस बात से कोई सरोकार नहीं है कि जो कश्त्य वह करते हैं वह उचित है या नहीं। दूसरे ऐसे होते हैं जो अपनी मत की पुस्तक का कुछ कम या अधिक अध्ययन करते हैं। परन्तु उनमे भी ऐसे ही अधिक हैं जो अपनी विवेक बुद्धि से यह जानने का प्रयत्न नहीं करते कि उन्होंने जो पढ़ा है या ग्रन्थों में लिखा वह सत्य है अथवा नहीं। वह जानकारी के लिए पढ़ते हैं, सत्यासत्य के विवेक के लिए नहीं। ऐसे लोग भी हमारी दश्ष्टि में ईश्वर को प्राप्त नहीं कर पाते हैं। ऐसे लोग पौराणिक मत सहित सभी मत, पंथ व सम्प्रदायों मे विद्यमान हैं। तीसरी श्रेणी में वह लोग आते हैं जो स्वाध्याय करते हैं, अपने मत के साथ दूसरे मत के ग्रन्थ का भी यत्किंचित अध्ययन करते हैं और अपनी विवेक बुद्धि का प्रयोग कर यह देखते हैं कि उनका पढ़ा या ग्रन्थ में लिखा सत्य है भी अथवा नहीं। शंका होने पर वह ऊहापोह, विचार, चिन्तन, अन्य ग्रन्थों या विद्वानों की सहायता प्राप्त कर निर्णय करते हैं। ऐसे लोगों में सबसे अधिक लोग वैदिक धर्मी वा आर्य समाज के अनुयायी होते हैं। हमें लगता है कि आर्य समाज की सन्ध्या-उपासना की विधि वेद व शास्त्रों के अनुसार है। इसमें मनीषियों ने यह ध्यान रखा है कि यह सरल व लक्ष्य-परक हो व इसके करने से अल्प समय में सफलता प्राप्त हो सके। इसमें त्रुटियों को खोज कर हटा दिया गया है। सन्ध्या-उपासना की विधि में कोई अनावश्यक कश्त्य नहीं है और कोई आवश्यक कश्त्य को छोड़ा नहीं गया है। अतः इस विधि को हम सन्ध्या-उपासना की सम्पूर्ण विधि कह सकते हैं। यह विधि महर्षि दयानन्द ने अपनी बनाई ''पंच-महायज्ञ-विधि'' की पुस्तक में दी है जिसे देखकर अभ्यास किया जा सकता है और उसे जानकर अन्य मतों की पूजा पद्धतियों से मिलान करके सही व गलत का चुनाव किया जा सकता है। हम समझतें हैं कि धर्म के प्रबुद्ध लोगों को पहली व दूसरी श्रेणी के भक्तों व उपासकों को तीसरी श्रेणी में लाने का प्रयास करना चाहिये जिससे सभी का कल्याण हो। हमारा अनुभव है कि बिना वेद व वैदिक साहित्य के अध्ययन के सही प्रकार से ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना नही की जा सकती। सभी अध्येता परीक्षण कर स्वतन्त्र परिणाम निकाल सकते हैं। हमारा यह भी मानना है कि सारे जीवन ईश्वर को मानने व उसकी पूजा, उपासना, भक्ति करने के बाद यदि हम पूर्णतः सफल व सन्तुष्ट नही हैं, ईश्वर की अनुभूति व साक्षात्कार हमें नहीं हुआ है और स्वमत व विपक्षियों के ईश्वर के स्वरूप, स्तुति, प्रार्थना, उपासना से सम्बन्धित शंकाओ या तर्को का सन्तोषजनक उत्तर नहीं दे सकते हैं तो हमारी उपासना व ज्ञान में कहीं न कही कोई कमी अवश्य है। हम आशा करते हैं कि सभी मतों के अनुयायी इस पर मनन करेगें।

जीवन का उद्देश्य जन्म व मश्त्यु के बन्धन से मुक्त होना है जिसे 'मोक्ष' कहते हैं। यह मोक्ष सद्कर्मो यथा ईश्वरोपसना, सत्कर्तव्यों का पालन, आचरण, अग्निहोत्र करने, माता-पिता-आचार्यो-अतिथियों व ऋषि-मुनि-विद्वान संन्यासियों की सेवा व सत्कार, दान, परोपकार, सेवा, अहंकार शून्य स्वभाव, दया व करूणा से पूर्ण जीवन व्यतीत करने आदि कर्मो को करने से प्राप्त होता है। आईये, हम वेद व वैदिक ग्रन्थों के स्वाध्याय व तदनुसार तर्क व प्रमाण युक्त ईश्वरोपासना करने का व्रत लें जिससे हम सभी जीवन के लक्ष्य को प्राप्त कर सकें। **—मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून**

शीर्ष पर संगीन अपराधों के मायने

वेद प्रकाश 'वैदिक'

इधर पिछले कुछ हफ्तों में दुष्कर्म के तीन मामले हमारे सामने आये हैं। पहला, आसाराम का, दूसरा सर्वोच्च न्यायालय के एक जज का और तीसरा पत्रकार तरुण तेजपाल का। यूँ तो देश में दुष्कर्म की घटनाएँ रोज़ ही हो रही हैं और उनकी सही संख्या का पता लगाना भी बहुत मुश्किल है, लेकिन ये तीनों मामले अपने आप में अन्य घटनाओं से सर्वथा अलग हैं।

आम तौर पर समझा यह जाता है कि दुष्कर्म के शिकार होने वाली अबोध, अशिक्षित और गरीब 'औरतें' ही होती हैं, वे 'महिलाएँ' नहीं, जोजागरूक हों, शिक्षित हो, संपन्न हों और सबल भी हों। इसके साथ यह भी माना जाता है कि अक्सर दुष्कर्मी लोग वे होते हैं, जिनकी कोई खास समाजिक जिम्मेदारी नहीं होती, और जिन्हें अपनी प्रतिष्ठा की भी विशेष चिंता नहीं होती। हालाँकि इन तीनों मामलों में आरोपी ऐसे लोग हैं, जो हमारे समाज के शिखर पर विराजमान हैं।

एक संत से, एक जज से और एक प्रधान संपादक से समाज क्या आशा करता है? किसी संत या जज से तो आदर्श आचरण की ही अपेक्षा की जा सकती है। ऐसा आचरण, जो दूसरे के लिए अनुकरणीय हो। पत्रकार भी आदर्श उपस्थित कर सके तो क्या कहने? लेकिन उसका आचरण सामान्य लोगों के आचरण से नीचा तो नहीं होना चाहिए। यहाँ तरुण तेजपाल का आचरण सामान्य से नीचा तो है ही, उसमें अहंकार और चालाकी की दुर्गंध भी है। छह माह तक प्रधान संपादक पद से छुट्टी लेना भी कोई प्रायश्चित्त है? यह तो प्रायश्चित्त का मज़ाक है। 'तहलका' की प्रबंध संपादिका शोभा चौधरी ने जिस तरह अपने संपादक का पक्ष लिया, वह पत्रकारों को गुस्सा दिलाने के लिए काफी है। क्रोधित पत्रकारों के सवालों के जवाब में वे पूछती हैं कि 'आप लोग पीड़िता हैं क्या? तीखे सवाल पूछने वाले पत्रकारों को भारत की जनता सलाम करेगी कि उन्होंने अपना धर्म निभाया। उन्होंने कोई लिहाज़दारी नहीं की। सबका भंडाफोड़ करने वाले एक दुश्चरित्र आदमी का भंडाफोड़ कर दिया।

कोई भी दुश्चरित्र आदमी इसलिए बचकर नहीं निकलना चाहिए कि उसने संत या जज का चोला पहन रखा है या पत्रकार का नकाब लगा रखा है? अब तेजपाल को न तो उनकी शोभा चौधरी बचा सकती है और न ही वे नेता बचा सकते हैं, जो उनके आभारी हैं। तहलका भंडाफोड़ की वजह से उन्हें तो तेजपाल को प्रसार भारती का सदस्य बनने से रोकना पड़ा है। जिस युवती के साथ उसने दुष्कर्म की कोशिश की है, अब वह भी उन्हें नहींङ्क बचा सकती, क्योंकि तेजपाल ने अपने गुनाह पर खुद मुहर लगा दी है। यह मुहर भी बड़ी गंदी है। उन्होंने खुद स्वीकार किया है कि उन्होंने वह सब शराब के नशे में किया है। इब आप दारू का यदा-कदा सेवन नहीं करते हैं, पर दारू कुट्टे हैं, यह आपने खुद मान लिया है। यानि आप दुष्कर्म और दारूबाजी, दोनों अपराधों के लिए एकसाथ जिम्मेदार हैं। शराब के नशे में होने से इस अपराध की गंभीरता किसी भी तरह कम नहीं हो जाती।

यदि अब तेजपाल को वह पीड़ित युवती भी किसी दबाव में आकर माफ कर दें, तो भी उन्हें अब जेल जाने से कोई बचा नहीं सकता, क्योंकि उस युवती ने अपने ईमेल में लिखा है कि तेजपाल ने उसके साथ दुष्कर्म की कोशिश एकबार नहीं, दो बार की है। लिफ्ट में जाते हुए दोनों बार वह युवती अपने कमरे की तरफ दौड़ी है, 'काँपते हुए और रोते हुए।' इसका अर्थ यह हुआ कि दुष्कर्म की यह घटना सिर्फ एक दिन का अचानक हुआ प्रसंग नहीं है। दोनों बार लिफ्ट में की गई करतूत बताती है कि यह एक दीर्घकालीन और सुनियोजित अपराध की पूर्ण मानसिक तैयारी का परिणाम है। तेजपाल ने अब तो माफी माँग ली है, लेकिन उस युवती को पहले लिखे ईमेलों में काफी धमकाया है। उसे यह भी कहा है कि वे नशे में थे। इस वजह से उन्हें गलतफहमी हो गई होगी। उसे नौकरी से निकालने की भी धमकी दी थी। यह युवती 'तहलका' पत्रिका में काम करती थी और तेजपाल की बेटी की सहेली भी है। वह 'तहलका' द्वारा आयोजित एक 'विचारोत्सव' में भाग लेने के लिए गोवा गई थी और तेजपाल व अन्य लोगों के साथ एक ही होटल में ठहरी हुई थी।

इससे भी अधिक गंभीर मामला एक सर्वोच्च न्यायालय के जज का है, जिसने सालभर पहले एक प्रशिक्षु वकील युवती के साथ अत्यंत आपत्तिजनक बर्ताव करने की कोशिश की थी। जज की उम्र उस युवती के दादा के बराबर है। जज महोदय, अब सेवा निवृत्त हो चुके हैं। उस पीड़ित युवती से रहा नहीं गया। उसने सीने में दबे इस राज़ को एक ब्लॉग में खोल ही दिया। सर्वोच्च न्यायालय ने पहल की और जाँच शुरू कर दी। शीघ्र ही उसके परिणाम भी सामने आएँगे। गौरतलब है कि यह घटना दिल्ली के एक होटल के कमरे में उन दिनों घटी है, जबकि निर्भया 'दामिनी' पर हुए नृशंस दुष्कर्म से सारा देश आंदोलित था। इस दुःस्साहसी बूढ़े-कूसट जज का नाम

अभी तक प्रकट क्यों नहीं हुआ।

सबसे घृणित मामला है, आसाराम का। आसाराम जिस तरह भागता रहा, छिपता रहा, धूर्ततापूर्ण बयान झाड़ता रहा और फिर सीखचों के पीछे चला गया, क्या कोई भी सज़ा उसके लिए काफी होगी?

वह तो जीते जी मरे के समान है। संत का चोला पहना हुआ यह नर-पशु चाहें, तो खुद को मौत से बदतर सज़ा देकर अनुकरणीय उदाहरण बन सकता है। क्योंकि संत का आचरण तो अनुकरणीय होना ही चाहिए न?

इन तीनों मामलों से हमें क्या सबक मिलता है? पहला, समाज में कानून का डर काफी नहीं है। 'समरथ को नही दोष गुसाई' । दोष सिद्ध हो जाए, तो भी सज़ा मिलने में इतनी देर लगती है कि सज़ा का कोई सामाजिक असर नहीं होता। दूसरा समाज में असालीन सामग्री के प्रचार ने यौन-अपराधों के साधारण घटना बना दिया है। समाज की बर्दाश्त करने की हद बढ़ गई है या कहिए कि संवेदनशीलता कुंद हो गई है। तीसरा, सत्ता, पैसा और प्रसिद्धी मिलने से जो ऊर्जा उत्पन्न होती है, यदि उसके उर्ध्वीकरण को रास्ते बंद हो जाए या उसे सकारात्मक इस्तेमाल में न जाए, तो व्यभिचार, दुष्कर्म, हत्या और छीना-झपटी में प्रकट होती है। चौथा हम अपराधियों को सिर्फ कानून और समाज का डर दिखाते हैं। उनके दिमाग से भगवान या किसी सर्वज्ञ व्यक्ति या अपने अंतःकरण का डर लगभग शून्य हो चुका है। इसलिए साधारण आदमी तो घृणित से घृणित कुकर्म बेखटके करता ही है, संत, जज, अध्यापक और पत्रकार जैसे प्रबुद्ध लोग भी कदाचार की गर्त में गिरने से नहीं हिचकते। दुष्कर्म तो हत्या से भी अधिक संगीन अपराध है। इसे हतोत्साहित करने के लिए राज्य, समाज और व्यक्तिगत अंतःकरण तीनों को एक साथ सक्रिय होना होगा।

कैसा परिवार हो हमारा

हमारी कल की और आज की स्थिति में कितना अंतर आ गया है। पहले संयुक्त परिवार होते थे। कई परिवारों में तो ऐसी स्थिति होती कि अपने बच्चे अपने माता-पिता को काका-सा कहते और बड़े पिताजी-माताजी को ही माता-पिता कहते, और समझते। बेटियाँ तो सहजता से ही घर का काम-काज सीख जाती। बच्चे कैसे और कहाँ बड़े हो जाते, पता ही नहीं चलता। दाद-दादी का दुलार बच्चों को निहाल कर देता है। नानी-दादी की वात्सल्यभरी थपकियों से नींद के आगोश में बच्चे माँ को कितनी राहत देते, माँ ही बता सकती है।

दादा-दादी की कहानियाँ बच्चों के चरित्र-निर्माण में सहायक बनती हैं। छुट्टियों में बच्चे मामा, मौसी, बुवा के घर जाते, साथ-साथ रहते, खेलते-कूदते। सबके साथ रहकर जीने की कला, सरलता और सहजता से प्राप्त हो जाती थी। सहनशीलता दाक्षिण्यता, कर्मठता , सज्ञनता और दूसरे गुण विरासत में मिलते। संयुक्त परिवार में सुरक्षा खुद-ब-खुद हो जाती थी। संयुक्त परिवार रिश्ते-नाते के वैभव से छलकता रहता था। अब तो स्थिति बिल्कुल विपरीत हो गई है।

सहनशीलता का अभाव, स्वतंत्र रहने की इच्छा ने संयुक्त परिवार को विघटन कर दिया है। 'हम, दो हमारे दो' का नारा भी नेपथ्य में चला गया है। एक बच्चा दस के बराबर होने लगा है। बेटियाँ ससुराल जाने के बाद खाना बनाना सीखती हैं। स्वार्थ-वृत्ति बढ़ने लगी है। परिवार का अर्थ संकुचित हो गया है। जिसमें पापा-मम्मी, बेटा-बेटी.. बस इतना ही आता है।

दादा-दादी भी अब परिवार की सीमा से बाहर हो गये हैं। तो उनका वात्सल्य तो कोसों दूर रहा। दादा-दादी का स्थान टीवी ने ले लिया है। टीवी ने बच्चों का भविष्य बनाने की जिम्मेदारी ले ली है। एकांकी परिवार में असुरक्षा की भावना डेरा डाल देती है।

एकांकी परिवार के बच्चे ज्यादातर अकेले रहना पसंद करते हैं। ऐसे परिवार में पलने वाले बच्चे असहिष्णु और अनुदार होते हैं। ऐसा नहीं है कि संयुक्त परिवार में लाभ ही लाभ है, हानि नहीं है और एकाकी परिवार में हानि ही हानि है, लाभ नहीं है। दोनों में लाभ भी है, तो हानि भी है, लेकिन लाभ का पलड़ा संयुक्त परिवार की ओर ही झुकता है।

एकल परिवार का सबसे बड़ा नुकसान तो यह है कि, इकलौती संतान संपत्ति से भले ही समृद्ध हो जाए, पर रिश्तों के मामले में तो कंगाल ही होती है। इसके लिए भाई-भाई, भाई-बहन, बहन-बहन के बीच के रिश्तों की मिठास का कोई अर्थ नहीं होता। यह अनुभूति उसकी किस्मत में नहीं होती। वह दिन दूर नहीं, जब मौसी, मामा, काका, चाचा, बुवा जैसे शब्द सुनने के लिए कान तरसेंगे।

हमें भी अकेले रहने की आदत होने लगी है, कहीं ऐसा न हो कि यह आदत इतनी तरक्की कर जाए, कि हम भी सगे-संबंधियों से दूर आदिवासियों की तरह रहने लगे।

दादा-दादी की कहानियाँ
कहीं गुम हो गई,
परिवार की खिलखिलाहट
कहाँ सो गई?
संपत्ति से समृद्ध होगी
भले नई पीढ़ी,
रिश्तों के नाम पर तो
कंगाल हो गई।

समान शिक्षा के लिए कॉमन स्कूल सिस्टम की आवश्यकता

-अम्बरीश राय

जनता की लंबी लड़ाई के बाद सन २००२ में देश के बच्चों को शिक्षा का मौलिक अधिकार, ८६ वे संविदान संशोधन के साथ संभव हो सका। परंतु यह अधिकार अपने आप में अपूर्ण तथा सारे बच्चों को शिक्षा के दायरे में शामिल किये बगैर था। देशभर से विरोध के स्वर उभरे कि इस अपूर्ण अधिकार को दुरुस्त किया जाए तथा ०-६ वर्ष के छूट गए सगभग १७ करोड़ बच्चों को भी संवैधानिक दायरे में शामिल किया जाए, ता कि देश स्कूली शिक्षा शुरू करने के लिए अपने बच्चों को तैयार करने की अपनी ज़िम्मेदारी का निर्वहन कर सके। पर हाल में संसद द्वारा पारित 'शिक्षा के मुक्त और अनिवार्य शिक्षा अधिनियम - २००९' ने भी इस गलती को सुधारने का कोई गंभीर प्रयास नहीं किया और ३ से ६ वर्ष के बच्चों को राज्य सरकारों के भरोसे छोड़ दिया। साथ ही १४ - १८ साल तक के बच्चे भी मौकिल अधिकारों से वंचित कर दिये गये। संवैधानिक अधिकारों की दूसरी बड़ी खामी यह थी कि इसे लागू करने की ज़िम्मेदारी राज्य सरकार द्वारा बनाये गये कानूनों की मर्जी पर डाल दी गई। इस संदर्भ में सुप्रिम कोर्ट द्वारा १९९३ में जे. पी. उन्नीकृष्णण बनाम आंध्र प्रदेश सरकार के मुकदमे में दिये गये फैसले का उल्लेख ज़रूर है, इसमें १४ साल तक के बच्चों को मुफ्त व अनिवार्य शिक्षा देना राज्य की ज़िम्मेदारी तय कर दी गई थी और उसके बाद भी बच्चों की शिक्षा जारी रखी जाएगी, जो राज्य की आर्थिक क्षमता व विकास पर निर्भर करेगी। इस फैसले और तत्पश्चात नागरिक समूहों की सक्रियता ने ही सरकार को संवैधानिक अधिकारों के लिए अनुच्छेद - २१ (अब २१-अ) में संशोधन करने के लिए मजबूर कर दिया था। पर यह अधिकार सुप्रिम कोर्ट के निर्णय के सामने कमज़ोर साबित हुआ। अब जबकि शिक्षा का संवैधानिक अधिकार तथा उसको लागू करने का शिक्षा अधिकार अधिनियम - २००९ पारित हो गया है और इसे १ अप्रैल २०१० से देशभर में लागू घोषित कर दिया गया है, तो हम कह सकते हैं कि यह कानून देश की जनता की आकांक्षाओं के अनुरूप खरा नहीं उतरता है। इसमें ढेर सारे ऐसे छिद्र हैं, जो बच्चों की शिक्षा के मौलिक अधिकारों को सुनिश्चित करने के मामले में न केवल रोड़ा है, बल्कि स्कूली शिक्षा के बाज़ारीकरण, निजीकरण के लिए नए दरवाज़े खोलते हैं। अगर इस पर ध्यान नहीं दिया गया, तो शिक्षा खरीद-फरोख्त की वस्तु बनी रहेगी और शिक्षा में 'समान अवसरों की गारंटी' एक दूर की कौड़ी साबित होगी। हमारे देश में शिक्षा के मामले में 'स्कूल की उपलब्धता, गुणवत्ता और सभी के लिए समान अवसरों का होना' हमेशा से चिंता का विषय रहा है। देश की सामाजिक बनावट व आर्थिक श्रेणीबद्धता 'सभी के लिए एक जैसी शिक्षा' के सिद्धांत के सामने हमेशा यक्ष प्रश्न रही है और शिक्षा हमेशा स्तरीय खाँचों में बंटी रही है। वर्गीय ढाँचे के अनुरूप शिक्षा के भी कई ढाँचे हैं, जो देश की सामाजिक संरचना में अंतर्निहित मज़बूत वर्गीय विभाजन को अभिव्यक्त करते रहते हैं। अभिजात्यों के लिए उनकी हैसियत के मुताबिक महँगे और साधन-सम्पन्न स्कूल तथा गरीबों व मेहनतकशों के लिए सरकारी व अर्ध सरकारी स्कूल, जिनकी गुणवत्ता लगातार गिरती रहती है, कभी धन के अभाव में, तो कभी लचर ढाँचों के कारण, तो कभी अकुशल, अनियमित और अल्पवेतन वाले अध्यापकों की अंधाधुंध भर्ती के ज़रिए। विडम्बना यह है कि देश की तीन-चौथाई आबादी के लिए बने सरकारी स्कूलों की दुर्दशा 'शिक्षा के लोकव्यापीकरण' के अंतर्राष्ट्रीय नारे के नाम पर जारी है। इन स्कूलों में बच्चों व अध्यापकों के अनुपात की तो बात ही निराली है। ग्रामीण क्षेत्रों में १०० बच्चों पर एक अध्यापक सभी विषय पढ़ाते अकसर मिल जाया करते हैं। इन स्कूलों में लगभग १० लाख अध्यापकों की कमी बनी हुई है। शिक्षाविद् प्रोफेसर कोठारी के शब्दों में -

'अमीरों के लिए शिक्षा और गरीबों के लिए साक्षरता'- वर्तमान में शिक्षा के मौजूदा ढाँचे की यह तार्किक परिणति है। स्वर्गीय गोपालकृष्ण गोखले ने १८ मार्च, सन १९१० में ही भारत में 'मुफ्त और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा' के प्रावधान के लिए ब्रिटिश विधानपरिषद के समक्ष प्रस्ताव रका था, जो निहित स्वार्थ था कि विरोध के चलते अंततः कारिज हो गया था। सन १९३७ में महात्मा गांधी ने सार्वजनिक शिक्षा की बात की, परंतु विरोधियों के रुख को देखकर उन्होंने स्व-वित्तपोषित नई तालीम में समाधान खोज लिया और 'ज्ञान की दुनिया को काम की दुनिया' के साथ जोड़ने की वकालत की। ताकि राष्ट्रीय परिवेश के अनुरूप शिक्षा का स्वरूप निर्धारित किया जा सके, बाबासाहब आंबेड़कर को भी संविधान सभा में १४ साल तक के बच्चों को शिक्षा का संवैधानिक अधिकार दिलाने के मामले में तरह-तरह के विरोध झेलने पड़े। अंततः उन्हें अनुच्छेद-४५ की मौलिक अधिकारों की जगह नीति निर्देशक सिद्धांतों में डालना पड़ा, जिसमें १०

वर्षों तक ०-१४ वर्ष तक के बच्चों को शिक्षा मुहैया कराने का वायदा किया गया था। बाबासाहब ने दलितों के लिए जो तीन सूत्र दिये, उसमें पहला ही शिक्षा ग्रहण करने का था, 'शिक्षित बनो, संगठित हों, संघर्ष करो' । आज़ादी के बाद भी शिक्षा पर बहस जारी रही और तमाम तरह के आयोग गठित किये गये । संसद में भी बहसें हुई, पर कोई कारगर परिवर्तन नहीं हुआ।

१९६६ में 'शिक्षा आयोग' का गठन हुआ, जो कोठारी कमिशन के नाम से लोकप्रिय हुआ, जिसने स्कूली शिक्षा से लेकर तकनीकी शिक्षा पर तक अपनी संस्तुतियाँ पेश की। स्कूली शिक्षा पर तमाम शिक्षाओं के बावजूद कोठारी कमिशन द्वारा की गई संस्तुतियाँ शिशा में सुधार के लिए मील के पत्थर की तरह है। परंतु दुर्भाग्य है कि बार-बार प्रतिबद्धता व्यक्त करने के बावजूद सरकार ने इसे लागू करने की ज़हमत नहीं उठाई। कोठारी कमीशन ने सामाजिक विभेदों को दूर करने के लिए शिक्षा में सुधार की बात कही थी और सभी के लिए 'समान अवसर उपलब्ध' करने का सुझाव दिया था। राष्ट्रीय एकता और सामाजिक न्याय के संवैधानिक दायित्व को पूरा करने के लिए कमीशन ने पड़ोसी स्कूल की अवधारणा पर आधारित शिक्षा के एक राष्ट्रीय ढाँचे को बनाये जाने पर ज़ोर दिया, जिसे उन्होंने कॉमन स्कूल सिस्टम (समान विद्यालय प्रणाली) का नाम दिया, जो पूरी तरह जनता के पैसे से (सरकारी निवेश) खड़ा किया जाा था और जिसके लिए उन्होंने सन १९६६ में ही सकल घरेलु उत्पाद का ६ प्रतिशत शि७ा पर खर्च करने का सुजाव दिया था। परंतु सरकार ने पैसे की कमी बताकर इस प्रस्ताव को खारिज कर दिया और अभी तक ३-४ प्रतिशत के बीच शिक्षा संपूर्ण बजट झूलता रहा है, जिसमें से कभी-कभी आधे से भी कम स्कूली शिक्षा पर खर्च होता है। जबकि लगभग ४० करोड़ बच्चों का भविष्य स्कूली शिक्षा से जुड़ा हुआ है। स्कूली शि७ा पर सरकार का यह अनौपचरिक रुख कमज़ोर बुनियाद पर मज़बूत इमारत बनाने जैसे दिवास्वप्न की तरह ही है।

मौजूदा कानून अपनी सीमाओं के बावजूद कुछ गिनी-चुनी उपलब्धियों के साथ हमारे सामने मौजूद है, जिसका देश के बच्चों के हित में इस्तेमाल किया जाना ज़रूरी है। इस कानून ने सभी तरह के स्कूलों के लिए (अनुदान रहित निजी स्कूलों सहित) कैपिटेशन फीस व दाखिले के लिए स्क्रिनिंग पर पाबंदी, स्कूलों के लिए निर्धारित माप-दंड का उल्लंघन करने पर दंड का प्रावधान आदि जैसे अच्छे कदम उठाये हैं। साथ ही अध्यापकों को एक सीमा अवधि में प्रशिक्षित किये जाने तथा एक किलोमीटर की दूरी पर स्कूल उपब्ध करने का प्रावधान रखा है। अनुदान रहित प्राइवेट स्कूलों में पड़ोस के गरीब बच्चों को स्कूल की संख्या का २५ प्रतिशत आरक्षण भी शायद प्राइवेट स्कूलों की संरचना को प्रभावित करने में असरदार साबित होगा। हालाँकि यह कॉन स्कूल सिस्टम का स्थानापन्न नहीं हो सकता है। मौजूदा कानून में स्कूल मैनेजमेंट कमीटी बनाने का प्रावधान (जिसमें ७५ प्रतिशत अभिभावक व ५० प्रतिशत महिलाएँ तथा कमज़ोर वर्गों की उचित भागीदारी) सरकारी व अर्ध सरकारी स्कूलों को सुधारने व उनकी देखरेख करने में जनता की सक्रिय भागीदारी का स्वागत योग्य रास्ता खोलेगा। स्कूल मैनेजमेंट कमीटी यदि जिवंत ढंग से गठित हों और ठीक से कार्य कर पाए, तो स्कूलों में सुधार लाने के साथ ही सिं समान शिक्षा के लिए देशव्यापी मंच के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। इस कानून में निगराणी की व्यवस्था बहुत कमज़ोर है, जो केंद्र व राज्य के बाल संरक्षण आयोग की सक्रियता पर बहुत कुछ निर्भर है। इसलिए इस कानून के सकारात्मक पहलुओं को लागू करा पाने का बहुत-कुछ दारोमदार जनता के संगठनों पर ही निर्भर है। देश में एक मज़बूत लॉबी है, जो सरकारी स्कूलों को भी निजी हाथों में सौंपने का अभियान चलाती रहती है, ताकि देश के विभिन्न हिस्सों में मौजूद सरकारी स्कूलों के ढाँचों पर कब्जा जमाया जा सकें और स्कूली शिक्षा से भी ढेर सारा मुनाफा बटोरा जा सके। यह ध्यान रखना होगा कि कॉमन स्कूल सिस्टम के लिए ज़रूरी है कि सरकारी स्कूल न केवल सरकारी क्षेत्र में बचे रहे, बल्कि ठीक से उनकी गुणवत्ता उन्नति करती रहे। सरकारी नीतियों के दोहरेपन पर भी रोक लगानी होगी। पब्लिक-प्राइवेट पार्टनरशिप और विशेष प्रतिभा विद्यालयों, मॉडल स्कूल, नवोदय, केंद्रीय विद्यालयों आदि को सरकारी क्षेत्रों में खोलने तथा उन्हें आम सरकारी स्कूलों के मुकाबले ज्यादा धन व सुविधाएँ आवंटित करने की नीतियों पर भी सवाल उठाना होगा। आप ही सोचिए यदि सरकारी संरक्षा में विशेष सुविधा के साथ केंद्रीय विद्यालय आदि की गुणवत्ता निजी विद्यालयों की तुलना में बेहतर बनाकर रखी जा सकती है, तो जनता के लिए उपलब्ध कम बजट वाले आम सरकारी स्कूल, क्यों नहीं बेहतर हो सकते हैं? बशर्ते कि उन्हें ज़रूरी संसाधन प्राथमिनिकता के साथ उपलब्ध कराये जाए।

नये संदर्भों में नागरिक समूहों व जन अभियानों को दो स्तर पर अपने कार्यभार को जारी रखना होगा। एक, दीर्घकालीन कार्यभार के बतौर शिक्षा के समान अवसरों के लिए कॉमन स्कूल सिस्टम की लड़ाई को तेज़ करना, दूसरा- मौजूदा कानून के अमल के लिए लोगों को न केवल्ल जागरूक करना, बल्कि इसके प्रावधानों के अमल पर निगरानी रखना और जन दबाव बनाए रखना।

(पृष्ठ ५ का शेष)

इससे यह निष्कर्ष निकालना उचित नहीं होगा कि विघटनकारी और आतंकवादी शक्तियों की बढ़ती हिम्मत भारत सरकार की नीति तथा राजनीतिक संगठनों की वोट बैंक की राजनीति का परिणाम है।

क्या प्रधानमंत्री और गृहमंत्री का यह विलाप भर काफी है कि चुनाव के समय आतंकी हमले हो सकते हैं या फिर इसे रोकने की ज़िम्मेदारी निभाने की दिशा में भी उन्हें कुछ करना चाहिए। कुछ वर्ष पूर्व भारत सरकार ने सभा राज्यों को आतंकवादियों के प्रति जीलोटालरेंस की हिदायत भेजी थी। इसके अनुरूप राज्यों ने क्या कार्यवाही की, इसकी जाँच के बहाने हुजरात सरकार को घेरने के लिए केंद्र सरकार ने आईजी और सीबीआई में ही युद्ध करा दिया। ऐसा माहौल बना दिया, जिससे ऐसा लगता है कि फर्ज़ी मुठभेड़ केवल गुजरात में ही होती है। बार-बार केवल यह सिद्ध किये जाने की कोशिश होती रही है कि कांग्रेस-विरोधी सारी पार्टियाँ मुस्लिमों की दुश्मन है, जिनसे उन्हें केवल कांग्रेस बचा सकती है। केवल वोट के लाभ के लिए अल्पसंख्यकवाद को बढ़ावा दिया जा रहा है तथा उनकी अलगाववादी गतिविधियों को नज़रंदाज़ किया जा रहा है। मुस्लिम समुदाय में इस सोच को पनपने नहीं दिया जा रहा है कि जो भारतीय संविधान के अनुसार सभी नागरिकों की समानता का पक्षधर है, वह उसका हितैषी है या फिर वह, जो लगातार उनका हितैषी होने का दावा कर उनकी पृथक पहचान की निरंतरता जारी रखना चाहता है। जहाँ यह नितांत आवश्यक है कि मुस्लिम समुदाय पृथकतावादी पहचान को नकारे, अपने युवाओं को गुमराह होने से बचाए, वहीं उससे अधिक इस बात की आवश्यकता है कि जो शासन चला रहे हैं, वे आतंकी हमलों की आशंका की बार-बार चेतावनी देकर उसे भी नारा बना देने की मुहिम न छेड़े, बल्कि पृथकतावादियों की कुचेष्टाओं के खिलाफ कटोरतम कार्रवाई करें। इसके लिए देश का राजनीतिक माहौल बदलना पड़ेगा, किन्तु वोट बैंक की राजनीति करने वाले ऐसा नहीं कर सकते। राजनीतिक महौल बदलने के लिए एक क्रांतिकारी साहस की ज़रूरत है। वर्तमान सत्ताधारी राजनीतिक नेतृत्व में इस साहस का नितांत अभाव है। इसलिए देश में अब राजनीतिक नेतृत्व परिवर्तन अपरिहार्य हो गया है।

(पृष्ठ ४ का शेष)

स्वरूप आर्य समाज तलवण्डी कोटा, जो अपने वार्षिकोत्सव का आयोजन हनुमान मंदिर परिसर में करता है, जहाँ बिना किसी रोक-टोक के आर्य समाज के सिद्धांतों का प्रचार किया जाता है। आर्य समाज विज्ञान नगर के वार्षिकोत्सव में उपस्थित होने वाले ७५ प्रतिशत से अधिक लोग गैर आर्यसमाजी होते हैं। इसके लिए एक विस्तृत कार्य योजना बनाई जाती है। आर्य समाज द्वारा कोटा शहर के व्यस्ततम चौराहों एवं सार्वजनिक स्थानों पर यज्ञ एवं प्रवचनों का आयोजन किया जाता है।

वेद-प्रचार का कार्य आर्य समाज के अतिरिक्त विद्यालयों में जाकर भी किया जाता है। सरकारी तथा निजी विद्यालयों में कार्यशाला आयोजित कर छात्रों तथा अध्यापकों को वेद और वैदिक सिद्धांतों का ज्ञान प्रदान किया जाता है।

कोटा के प्रसिद्ध राष्ट्रीय दशहरे मेले में महर्षि दयानंद वेदप्रचार समिति द्वारा प्रतिवर्ष वैदिक साहित्य विक्रय केंद्र तथा चित्र प्रदर्शनी लगायी जाती है। लगभग २० दिन चलने वाले इस मेले में प्रतिदिन ३० से ४० हज़ार लोग आते हैं। ये कुछ उदाहरण मात्र है कि किस प्रकार समाज सेवा के कार्यों के द्वारा लोगों को अधिक से अधिक आर्य समाज से जोड़ा जा सकता है। समाजसेवा के ये कार्य सीधे लोगों के मन में घर करते हैं।

दूसरी एक और मुख्य बात है कि आज के इस व्यावसायिक युग में एक बात कही जाती है, जिसका विज्ञान और मार्केटिंग अच्छी होती है, उसका ही सामान बिकता है। आर्य समाज, जिसके पास विश्व की सर्वश्रेष्ठ धरोहर वेद-ऋषियों के सिद्धांत, संस्कार और संस्कृति है, आज उसकी बात से आम जनता अपिरिचित है। इसका कारण है हमारे द्वारा सही प्रचार-प्रसार नीति को नहीं अपनाना। आज भी हम राष्ट्रीय और क्षेत्रीय इलेक्ट्रॉनिक एवं प्रिंट मीडिया से दूर हैं। हमारे विद्वानों द्वारा लिखित लेख हमारी ही पत्र-पत्रिकाओं में छपते हैं, जिन्हें हम आर्य समाजी ही पढ़ते हैं। हमारे कार्यों को हम कभी मीड़िया और प्रेस के सामने नहीं लाते हैं।

स्वामी रामदेवजी का उदाहरण हमारे सामने हैं, किस प्रकार आपने मीड़िया का प्रयोग कर योग को जन-जन तक पहुँचाया है। एक बड़ी प्रसिद्ध कहावत है कि जंगल में मोर नाचा, किसने देखा? हमें प्रेस और मीड़िया का प्रयोग कर मोर को नाचते हुए दिखाना होगा। कहने का तात्पर्य यह है कि हमारे प्रत्येक कार्यक्रम को प्रेस और मीड़िया के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाना होगा। हमें जंगल में नाचते मोर को लोगों को दिखाना होगा। अर्थात आर्य समाज को चार दीवारी में किये जा रहे कार्यों को आम आदमी तक पहुँचाना होगा तभी वह आर्य समाज के निकट आ पाएंगे। इसलिए हे ऋषिपुत्रों, अब समय आ गया है कि ऋषि के ऋण से कुछ उऋण होने के लिए हम अपनी कार्यशैली में परिवर्तन करें और समाजसेवा के कार्यों को आधर बनाकर आम व्यक्ति तक आर्य समाज को पहुँचाये, जिससे अधिक से अधिक लोगों तक वेद-विज्ञान का सूर्य पहुँच सके और निश्चय कर लें कि हमारा प्रत्येक कार्य प्रेस तथा मीड़िया के माध्यम से अनिवार्य रूप से प्रत्येक जन तक पहुँचे और इसके लिए सबसे बड़ी ज़रूरत है कि हम आर्य समाज की चार-दीवारी से बाहर निकले और देखें कि कितना बड़ा विशाल भारत टकटकी लगाये आपकी ओर आशा भरी नज़रों से देख रहा है।

(पृष्ठ २ का शेष)

न होकर आशावादी बना रहे तथा दुर्गति को प्राप्त होने पर भी पाप न करे। आर्य वीर होता है, कायर कदापि नही होता। सिख मत के एक ग्रन्थ पंच प्रकाश में कहा गया है कि 'जो तुम सिख हमारे आरज देवों सीस धर्म के कारज' अर्थात् यदि तुम हमारे सिख=शिष्य और आरज=आर्य हो तो धर्म की रक्षा के लिए अपना शीश अर्पित करो। आर्य की पहचान उसके सिर पर चोटी व कन्धें पर यज्ञोपवीत हुआ करता था। इन दोनों चोटी व यज्ञोपवीत के लिए सहस्रों व लाखों आर्यो ने अपने सीस बलिदान किये हैं। अपने यज्ञोपवीत संस्कार पर शिवाजी महाराज ने आज से लगभग ४५० वर्ष पूर्व ७ करोड़ १० लाख रूपये खर्च किये थे। इससे अनुमान किया जा सकता है कि आर्य कहलाने का क्या महत्व होता है। महाराणा प्रताप सहित अन्य अनेकों ने अपनी आन, बान व शान के लिए शब्दों में न कही जा सकने वाली दारूण विपदायें सहीं परन्तु अपना आर्यत्व का स्वाभिमान नहीं छोड़ा।

समस्त वेद को एक प्रकार से हम मानव को आर्य बनाने के विधान का पुस्तक भी कह सकते हैं। यह विधान किसी एक मनुष्य, जाति या समुदाय तक सीमित न होकर सारे संसार के प्रत्येक मानव, स्त्री व पुरूष, के लिए है और सभी समान रूप से इसक अधिकारी हैं। आर्य में सन्निहित गुणों, कर्मो व स्वभावों को धारण करने वा कराने के लिए ही महर्षि दयानन्द सरस्वती ने १० अप्रैल, १८७५ को मुम्बई में आर्य समाज की स्थापना की थी। आर्य समाज के दस उद्देश्यों व नियमों को यदि देखें तो इसमें भी मनुष्यों को आर्य बनाने का ही विधान किया गया है। आर्य वह होता है जो यह मानता है कि सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उनका आदि मूल परमेश्वर है। आर्य, ईश्वर को सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तरयामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सश्ष्टिकर्ता जानता व मानता है एवं उसी की उपासना करता है, ईश्वर से भिन्न अन्य किसी की उपासना नहीं करता। आर्यो के लिए वेद ईश्वर से उत्पन्न सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है और वेद को पढ़ना व दूसरों को पढ़ाना, सुनना व अन्यों को सुनाना उनका परमधर्म है। आर्य सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहते हैं। वह सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य व असत्य को विचार कर करते हैं। संसार का उपकार करना अर्थात् सबकी शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना प्रत्येक आर्य का कर्तव्य है और यही आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य भी है। वेदों की मान्यता के अनुसार आर्य सभी से प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार व यथायोग्य व्यवहार करते हैं। आर्य का ध्येय वाक्य है कि अविद्या का नाश व विद्या की वश्द्धि करनी चाहिये। वह ही आर्य हैं जो अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट नहीं रहते अपितु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझते हैं। आर्य समाज का दसवां अन्तिम नियम है कि सभी मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम पालने में सब स्वतन्त्र रहें। आर्य समाज की स्थापना वेदों के ज्ञान को देश विदेश में प्रचारित करने के लिए की गई थी। साथ हि देश-विदेश में फैले पाखण्ड, अन्धविश्वास, कुरीतियों व अज्ञान को मिटा कर वेद ज्ञान के अनुसार मानव जीवन को संवारने का प्रयास करना भी उसका उद्देश्य था। यद्यपि आर्य समाज की विचाराधारा का सारे विश्व पर व्यापक प्रभाव हुआ है तथापि जो कुछ हुआ उससे कहीं अधिक होना अभी शेष है। इसके लिए हमें अपने संगठन को प्रभावाली बनाना है। आज हमारे संगठनों की मुख्य समस्या लोगों का धन, सम्पत्ति, पद व प्रतिष्ठा के मकड़जाल में फंसे होना है। यदि यह दूर हो जायें तो आर्य समाज का संगठन अपेक्षित उद्देश्य को पूरा करने में सक्षम व समर्थ हो सकता है।

हम समझते हैं कि यह कार्य हो नहीं पा रहा है। ऐसा न होने के कारण बहुत से लोग संगठन से पश्थक होकर या तो स्वतन्त्र रूप से कार्य करते हैं या फिर शिथिल हो जाते हैं। हमारे आस-पास ऐसे शिथिल हो गये लोगो की बड़ी संख्या है। ऐसे लोगो को एकत्रित कर एक आजाद हिन्द फौज की तरह प्रत्येक जिले के स्तर पर संगठन बनाया जा सकता है जिसमें किसी भी आर्य समाज के पदाधिकारी को स्थान न देकर वही लोग हों जो अपने-अपने समाज के संगठन से असन्तुष्ट हों। वह संगठन में अपनी भूमिका स्वयं तय करें और महर्षि दयानन्द के स्वप्नों को साकार करने के लिए अपना श्रम, बल व पुरूषार्थ अर्पित करें। जो लोग आर्य समाज के संगठन से जुड़े हुए व उसमें सक्रिय हैं, उन्हें भी आर्य समाज के अपने दायित्वों को निर्धारित कर उस पर आचरण करना चाहिये। आर्य समाज में होने वाले साप्ताहिक सत्संगों के अतिरिक्त आर्य समाज के लगभग १ किमी. की परिधि में सघन प्रचार की योजना बना कर उसमें सहयोग करना चाहिये। लोक सभा, विधान सभा व नगर निगम आदि के चुनाव की भांति अपने क्षेत्र में प्रत्येक व्यक्ति या परिवार तक जाकर उन्हें वैदिक साहित्य भेंट करना चाहिये। इस अवसर पर कुछ लघु पुस्तकें उन्हें भेंट की जा सकती हैं जिनके विषय हमारा धर्म एवं वेद, मनुष्य का यथार्थ धर्म क्या है?, धर्म और अधर्म, आर्य धर्म और कर्म फल सिद्धान्त, क्या मांसाहारी व मद्यपायी का अगला जन्म मनुष्य का ही होगा?, आर्य समाज की मान्यतायें, आर्य समाज का अतीत व इसके भविष्य की योजनायें, वेद का महत्व व अन्य मत-मतान्तर, ईश्वर का यथार्थ स्वरूप व हमारी पूजा पद्धतियां, मनुष्यों के पांच प्रमुख नित्य कर्म व हमारी दिनचर्या, वेदों के अनुसार जीवन से वर्तमान व भविष्य मे होने वाले व्यक्तिगत व सामाजिक लाभ व उन्नति आदि अनेकानेक विषयों पर स्वरचित व प्रकाशित व अन्यत्र प्रकाशित साहित्य मंगाकर लोगों को वितरित किया जा सकता है।

आर्य समाजों में विद्यार्थियों के लिए यह व्यवस्था हो कि प्रत्येक रविवारीय सत्सग में १२ से २० वर्ष के विद्यार्थी का एक ५-१० मिनट का प्रवचन कराया जाये जिसका विषय उसे आर्य समाज मे एक माह या दो माह पहले दे दिया जाये। उस विषय से सम्बन्धित लिखित सामग्री भी उसे तैयारी करने के लिए पूर्व ही दे दी जाये। इससे युवक वर्ग को आर्य समाज से जोड़ा जा सकता है। सत्यार्थ प्रकाश का पाठ, भजन, सामूहिक प्रार्थना, स्वरचित कविता पाठ आदि विद्यार्थी व युवा वर्ग के युवक-युवतियों द्वारा ही सम्पन्न करायें जायें तो इसके अच्छे परिणाम हो सकते हैं। इसका प्रयोग हम वर्ष १९९३-१९९४ में देहरादून में कर चुके हैं। इसके साथ आर्य समाज के अधिकारियों को सपरिवार सत्संग में आने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिये। ऐसे व्यक्तियों को जो परिवार सहित आर्य समाज में वर्ष में अधीक से अधिक आयें उन्हें पुरूस्कश्त किया जाना चाहिये। हमें यदा-कदा अन्तरंग वा साधारण सभा की होने वाली बैठकों में यह विचार करना चाहिये कि वेदों के प्रचार को अधिक प्रभावशाली कैसे बनाया जा सकता है? आर्य समाज में केवल वैदिक विद्वानों के ही प्रवचन न हों अपितु यदा-कदा आर्यसमाज से इतर प्रतिष्ठित व्यक्तियों को देश, धर्म व संस्कश्ति से जुड़े विषयों पर व्याख्यान देने के लिए आमंत्रित

किया जाये और उन्हें आर्य साहित्य ससम्मान भेंट किया जाये। हम अनुभव करते हैं इन सबका आर्य समाज के प्रचार व विस्तार पर अनुकूल प्रभाव पड़ेगा। आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य वेदों के अनुसार देश, समाज व व्यक्ति का निर्माण करना व न्याय व्यवस्था स्थापित करना है। वेद से अच्छी व्यवस्था कोई हो ही नहीं सकती है। यदि कहीं कुछ अच्छा है जो हमें अपने पास नही दीखता, तो उसे परीक्षा कर स्वीकार कर लेना चाहिये। हमारा मानना है कि आर्य समाज हर दृष्टि से श्रेष्ठतम समाज व संस्था होनी चाहिये। यदि नहीं है तो फिर हम अपनी संस्था को आर्य समाज नहीं कह सकते। हम नगरों की प्रत्येक आर्य समाज में एक अतिथिशाला की अनिवार्यता भी अनुभव करते हैं जहां अतिथियों के लिए कम से कम पांच कक्ष या कमरे हों। स्वच्छ बिछौने, स्वच्छ आधुनिक शौचालय व स्नानागार, भोजन, जलपान, चाय, काफी आदि की उचित मूल्य पर व्यवस्था भी होनी चाहिये। आज की परिस्थितियों में यह आवश्यक नही है कि आर्य समाज में दो-तीन दिन के प्रवास पर आने वाले से आर्य समाज के अधिकारी का लिखा हुआ पत्र मांगा जाये। कोई भी व्यक्ति जो अपने मान्य परिचय पत्र की फोटो कापी देता है, उसे अतिथिशाला में स्थान मिल जाना चाहिये। अधिकारी व कर्मचारियों का व्यवहार उन आगन्तुकों के प्रति अपने परिवार जैसा होना चाहिये। एक बार हम वर्षा के कारण मार्ग के किनारे एक धार्मिक संस्था में रूक गये। हमें आश्चर्य हुआ कि वहां के कर्मचारी व अधिकारियो ंने अपने आसन छोड़ दिये और हमें बैठने का अनुरोध किया। ऐसा प्रिय व्यवहार किया जिसकी हमें उनसे अपेक्षा नही ंथी। ऐसा सम्मानजनक व प्रिय व्यवहार हमें अपने जीवन में किसी अपरिचित आर्य समाज से मिला ही नहीं है जबकि आर्य समाजों में जाने पर हुए कटु अनुभव तो अनेक हैं। अतः आर्य समाज का व्यवहार में व्यापक दृष्टिकोण को अपनाना व दूरदर्शिता से काम लेना संस्था व संगठन के लिए हितकारी है। समय-समय पर आर्य समाज की शिरोमणि सभायें व संस्थायें आर्य महासम्मेलन आयोजित करती रहती हैं। हमारी दृष्टि में यह आयोजन बहुत ही आवश्यक एवं उपयोगी हैं। इन आयोजनों में हमें आर्य समाजों की वर्तमान स्थिति पर विचार कर उन्हें अधिक प्रभावशाली नये दिशा निर्देश देने चाहियें। जिस आर्य समाज की कोई विशेष उपलब्धि हो उसे पुरूस्कृत भी करना चाहिये जिससे अन्य उसका अनुकरण कर सकें। विद्वानों को ऐसा चिन्तन प्रस्तुत करना चाहिये जिससे आर्यो का मार्ग दर्शन हो। समाज द्वारा उपेक्षित विद्वानों व वृद्ध सदस्यों को अपने आसपास के आर्य समाजों में जाते रहना चाहिये और वहां जो भी अच्छाईयां व कमियां दृष्टि गोचर हों, उन्हें सम्बन्धित सभा के अधिकारियों को सुधार के लिए लिखित व मौखिक पहुंचाना चाहिये। इस बात की चिन्ता नहीं करनी चाहिये कि वह जिस आर्य समाज की कमियां सूचित कर रहे हैं, वहां के अधिकारी व सदस्य उनसे नाराज हो जायेगे। यदि खेत में समय पर फसल को बोना व काटना, खाद, पानी, निराई, गुडाई आदि कार्य नहीं होगा तो फिर उस फसल से आशानुरूप फल की प्राप्ति नहीं होगी। हां, विद्वानों को आप्त पुरूष बन कर निष्पक्ष रूप से अपने कर्तव्यों का निर्वाह करना चाहिये। उनका उद्देश्य अपना व्यक्तिगत राग-द्वेष पूरा करना या निज लाभ व हानि नहीं होना चाहिये। निष्पक्ष भाव से ऐसा करने से समाज व आर्य समाज के मिशन के उद्देश्य की पूर्ति का लाभ होगा जिसका श्रेय मुख्य या गौण रूप से उन समालोचक बन्धुओं को भी मिलेगा। सभी महासम्मेलनों में अनेक विषयों के साथ-साथ सरकारी एंवं निजी कार्यालयों व जीवन में हिन्दी के व्यवहार व प्रयोग की समीक्षा, विदेशी भाषा की स्थिति, हिन्दी के प्रयोग से समस्त देशवासियों को लाभ, हिन्दी को न अपनाने व अंग्रेजी को जारी रखने से आम आदमी को होने वाली कठिनाई व हानि पर व अन्य अनेक बिन्दूओं पर विचार होकर मांग-प्रस्ताव पारित किये जाने चाहियें। इसी प्रकार गोरक्षा व मांसाहार पर भी सारगर्भित विचार व समीक्षा होकर सरकार को प्रस्ताव भेजे जाने चाहिये। आर्य समाज के प्रचार प्रसार के लिए एक अभिनव योजना यह बना सकते हैं कि स्कूलों की छुट्टियों के अवसर पर युवा विद्यार्थियों को साथ लेकर गली, मुहल्लों व बस्तियों में जाकर मौखिक वेद प्रचार किया जाये जिस प्रकार की ईसाई बन्धु करते हैं। पूर्व कथन के अनुसार देश काल व परिस्थिति के अनुरूप साहित्य रचकर व प्रकाशित कर उसे वितरित भी किया जा सकता है। यदि इस प्रकार की योजना बनेगीं तो निश्चित रूप से समाज में जागृति आयेगी और आर्य समाज को लाभ होगा। सम्मेलन से पूर्व आर्य समाजों से यह जानकारी प्राप्त कर कि किसने कितने सत्यार्थ प्रकाश त्रैमासिक, छःमाही या वार्षिक वितरित किये, उससे विद्वानों, वक्ताओं व श्रोताओं को अवगत कराना चाहिये और अन्य सभी को ऐसा करने की प्रेरणा करनी चाहिये। आर्य समाज की वैब पर सत्यार्थ प्रकाश एवं प्रमुख ग्रन्थों की अनेक भाषाओं की पीडीएफ बनाकर अपलोड करनी चाहियें जिससे दुनियां भर में लोग इनसे लाभ उठा सके। हमने कल ही पारसी मत की लगभग ३६५ पृष्ठों की धर्म पुस्तक ''जन्द-अवेस्ता'' के अंग्रेजी अनुवाद व संस्करण को अपने कम्प्यूटर पर प्राप्त किया है। बाइबिल, अन्य धर्म पुस्तकें व अन्य सामग्री भी नैट पर उपलब्ध हैं। आज के समय में प्रचार में यह कार्य आवश्यक एवं सहायक है। हमारे विद्वानों को आर्य महासम्मेलन में विद्वानों को प्रचार के नये-नये तौर तरीकों, विधियों व प्रचार योजनाओं पर विचार व्यक्त करने चाहिये जिससे सम्मेलन में भाग लेने वालों का मार्गदर्शन हो। पण्डित लेखरामजी ने अपनी वसीयत में कहा था कि लेख या लेखन का कार्य जारी रहना चाहिये। हमें आज आर्य समाज की विचारधारा, सिद्धान्तों व मान्यताओं को सर्वोत्कृष्ट व सर्वोत्तम सिद्ध करने वाले लेख व अन्यों के पाखण्ड, कुरीतियों, अन्धविश्वासों व अज्ञान को आर्य समाज के ६ठें नियम के अनुसार विस्तृत तर्को व प्रमाणों के साथ प्रस्तुत कर विरोधियों की अज्ञानमूलक मान्यताओं को अस्वीकार्य बनाना चाहिये। ऐसे अनेकानेक विषय हो सकते हैं जिन पर विचार कर हम अपना भावी पथ निर्धारण कर सकते हैं। आर्य, वेदों के अनुसार जीवन व्यतीत करने वाले व्यक्ति को कह सकते हैं। वैदिक मान्यताओं के अनुरूप जीवन उत्कृष्ट जीवन होता है ऐसा हमारे एक लेख 'वैदिक जीवन पद्धति श्रेष्ठ व सर्वोत्तम' (वेदवाणी दिसम्बर २०१३ व जनवरी २०१४) में सोदाहरण प्रस्तुत किया गया है। ऐसा सर्वोत्कृष्ट जीवन संसार के प्रत्येक व्यक्ति का होना चाहिये इसी के प्रचार के लिए महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना की थी। आर्य महासम्मेलन आर्य समाज को गतिशील बनाने एवं लक्ष्य प्राप्ति में सहायता व दिशानिर्देश देने का कार्य करता है। सभी आर्यो, आर्य समाज के अधिकारियों व कार्यकर्ताओं को वर्तमान एवं भावी आर्य महासम्मेलनो में प्रस्तुत विद्वानों व आर्य नेताओं के विचारों को मनन कर उससे लाभ उठाना चाहिये।

.. –मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

"बंधुआ मुक्ति मोर्चा ने दिल्ली में मुक्त कराया बंधुआ मजदूर"
दिल्ली में खूब पनप रही है आदिवासी बच्चों व महिलाओं की तस्करी

निर्मल गोराना-कार्यवाहक निदेशक, बंधुआ मुक्ति मोचा

किसी भी सरकारी और गैर सरकारी संगठनों की बात करें तो राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली में उनका मुख्यालय या प्रमुख शाखा बेशक मिल जायेगी और इन कार्यालयों में काम करने वाले कर्मचारियों के बड़े-बड़े बंगलों में यदि घरेलू काम के लिए एक दिन भी नौकर ना हो तो अफरा-तफरी मच जाती हैं। यह भी शत प्रतिशत सत्य है कि तमाम बंगलों के मालिक किसी न किसी प्लेसमेंट ऐजेन्सी से, जो चाहे पंजीकृत हो या ना हो घरेलू नौकर तो निश्चित रूप से लेते हैं।

दिल्ली में घरेलू कामगारों के सप्लाई के लिए संचालित प्लेसमेंट ऐजेन्सियों का मक्कड़ जाल मानव तस्करी करके अपने हाथ काले कर रहा हैं। मानव तस्करी संविधान में दण्डनीय अपराध होने के बावजूद भी तीव्र वेग से बढ़ती जा रही हैं अर्थात दिल को लुभाने वाली दिल्ली दिल को दहला देने वाली बन गई है। झारखण्ड, पश्चिमी बंगाल, छतीसगढ़, आसाम, मध्यप्रदेश, बिहार जैसे राज्यों से बड़े पैमाने पर आदिवासी बच्चों एवं महिलाओं को झांसा देकर प्लेसमेंट ऐजेन्सियों के ऐजेन्ट द्वारा घरेलू काम करने के लिए दिल्ली लाया जा रहा है अर्थात दिल्ली में बच्चों और महिलाओं की तस्करी खूब फल-फूल रही हैं।

प्लेसमेंट ऐजेन्सियां दिल्ली में बने बंगलों के मालिकों से एडवान्स राशि लेकर घरेलू कामगार उपलब्ध कराती है। इन मालिकों को भी कम या आधे वेतन पर घरेलू कामगार मिल जाता है। बंगला मालिक इन प्रवासी घरेलू कामगारों से जानवर की भांति असिमित काम लेते हैं। घरेलू कामगारों की उम्र, शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन और उसके डूबते अंधकारमय जीवन से भला मालिक को क्या मतलब ? ऐसा प्रतीत होता है कि मालिक ने बस इन्सानी शरीर में काम के लिए एक जानवर खरीद लिया हो जिससे मर्जी चाहे वेसे काम ले भी लो, तो कोई भी रोकने टोंकने वाला नही हैं। हमारे देश में घरेलू कामगारों को न्याय दिलाने के लिए अलग से कोई कानून नही हैं। ऐसी स्थिति में घरेलू कामगारों की तस्करी का व्यापार खूब पनपता जा रहा हैं। घनघोर अंधेरे से भरी अमावस्या की रात में रोशनी की एक किरण भी कितना सकून पहुंचाती है यह बया किया एक १४ वर्षीय आदिवासी बंधुआ मजदूर बुधराम ने।

पश्चिम बंगाल के जिला जलपाईगुड़ी में गांव-भण्डीगुड़ी निवासी बालक बुधराम को डेढ़ वर्ष पूर्व जॉन नामक एक ऐजेन्ट बहला-फूसला कर घूमने के बहाने दिल्ली में ले आया। दिल्ली घूमने के बजाय बुधराम मानव तस्कारों की भेंट चढ़ गया। बुधराम को निकिता प्लेसमेंट ऐजेन्सी के मालिक श्री लक्ष्मण कुमार एवं ऐजेन्ट श्री अशोक कुमार को बेच कर जॉन अपना कमीशन लेकर नो दो ग्यारह हो गया। ईधर प्लेसमेंट ऐजेन्सी ने दिल्ली के पीतमपुरा क्षेत्र में रहने वाले एक बड़े बंगले के मालिक श्री किशन बसिया के घर बुधराम को घरेलू कामगार बना कर पहुंचा दिया। पूरे डेढ़ वर्ष तक मालिक श्री किशन बसिया के यहां बेगार करता बालक मालिक के घर से भागने में कभी भी कामयाब नही हो पाया। आस्तिक विचारधारा रखने वाला बुधराम दिन-रात ईश्वर को याद करता और उस गुलामी रूपी अंधेरे में भी आजादी की किरण का ईन्तज़ार करता रहा। बुधराम ने बताया कि प्रतिदिन १८ घंटे काम करने के बावजूद भी उसे नींद नही आती थी और वो सोचता रहता था कि वो सुबह कभी तो आयेगी जब इस सोने के पिंजरे से उसे मुक्ति मिलेगी।

बुधराम के अंधकारमय जीवन में बंधुआ मुक्ति मोर्चा एक रोशनी की मशाल तब साबित हुआ जब जिला जलपाईगुड़ी निवासी इरेनियस लकड़ा नामक आदिवासी युवक ने बंधुआ मुक्ति मोर्चा को, बुधराम द्वारा बंधुआ मजदूरी करने के संबंध में जानकारी दी। तत्काल ही संगठन ने संबंधित उप खण्ड अधिकारी को सूचना दी और संगठन ने प्रशासन के सहयोग से बुधराम को मुक्त कराया। बुधराम ने संगठन की उपस्थिति में उप खण्ड अधिकारी के सामने बयान किया कि वो लगभग डेढ़ वर्ष से श्री किशन बसिया के घर में जबरदस्ती बेगार कर रहा है तथा घर जाना चाहता है। इसी के साथ वो अपराधियों के खिलाफ कड़ी कार्रवाई भी चाहता है।

बंधुआ मुक्ति मोर्चा ने मुक्ति प्रमाण के साथ पुलिस की उपस्थिति में बालक को तुरन्त चाईल्ड वेलफेयर कमेटी को सुपुर्द किया तथा बालक के परिजनों से सम्पर्क कर उन्हें सम्पूर्ण घटनाक्रम से अवगत कराया। चाईल्ड वेलफेयर कमेटी ने बालक को दिल्ली की न्यूनतम मजदूरी की दर के अनुसार १,२६,०००-/ रू० का चैक देकर परिजनों को सोंपा। बालक के पुनर्वास संबंधित कार्रवाई संगठन द्वारा वर्तमान में जारी हैं। बालक अपने परिजनों के साथ अपने घर जाने को बड़ा बेताब और खुश था। अपने घर लौटते वक्त बालक ने कहा कि बंधुआ मुक्ति मोर्चा ने ही मेरे अंधेरे जीवन में आजादी का दीया जलाया है। अगर बंधुआ मुक्ति मोर्चा न होता तो मैं मानव तस्करों के बीच ही गुलामी की जंजीरों में जकड़ा रहता इसलिए विशेष रूप से बंधुआ मुक्ति मोर्चा के अध्यक्ष स्वामी अग्निवेश जी को मैं धन्यवाद करता हूं जो हमारे जैसे गुलाम भाई-बहनों को आजादी की राह देने और समाज की मुख्य धारा से जोड़ने के लिए विगत ३३ वर्षो से बंधुआ मजदूरी के खिलाफ अभियान चला रहे हैं।

राजस्थान के राजसमन्द एवं उदयपुर जिले में तीन मश्त्युभोज रोकें

बंधुआ मुक्ति मोर्चा द्वारा मश्त्युभोज के खिलाफ चल रहे अभियान के तहत श्री निर्मल गोराना के प्रयास से राजस्थान के राजसमन्द एवं उदयपुर जिले में तीन मश्त्युभोज रोकें गए।

पहला मश्त्युभोज गांव रावलिया कला, तहसील गोगुन्दा, जिला-उदयपुर निवासी श्री कालू लाल टेलर की माताजी के स्वर्गवास के उपरान्त दिनांक १० जनवरी, २०१४ को आयोजित होना था जबकि दूसरा मश्त्युभोज गांव फतेहपुर, तहसील व जिला--राजसमन्द, निवासी श्री मांगी लाल टेलर और श्री भंवरलाल टेलर की बहन के स्वर्गवास के कारण दिनांक ७ जनवरी, २०१४ को किया जाना तय था किन्तु बंधुआ मुक्ति मोर्चा के कार्यकर्ताओं के द्वारा मश्त्युभोज का पुरजोर विरोध करने और संगठन की पहल पर जिला प्रशासन द्वारा आयोजनकर्ताओं को पाबंद किये जाने के कारण आयोजनकर्ता मश्त्योजन के आयोजन में असफल रहे।

तीसरा मश्त्युभोज गांव पुरोहितों की बड़गांव, तहसील-मावली जिला-उदयपुर निवासी श्री माणक चन्द लौहार `ध्व श्री भगवान लाल लौहार के स्वर्गवास के अवसर पर मश्तक के पुत्र श्री मीठालाल लौहार द्वारा दिनांक १७ जनवरी, २०१४ को किया जाना तय था किन्तु आयोजन के पूर्व ही संगठन ने उदयपुर जिले के जिलाधिकारी एवं संबंधित उप खण्ड अधिकारी को पत्र प्रेषित कर मश्त्युभोज रोकने की मांग की।

परिणाम स्वरूप बंधुआ मुक्ति मोर्चा को तीनों मश्त्युभोज के आयोजनों को रोकने में सफलता मिली।

निर्मल गोराना-कार्यवाहक निदेशक, बंधुआ मुक्ति मोर्चा

ఆర్య జీవన్
హిందీ-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక
ఆర్య ప్రతినిధి సభ ఆంధ్రప్రదేశ్, 4 - 2 - 15
మహర్షి దయానంద మార్గము
సుల్తాన్ బజార్, హైదరాబాద్ - 500 095
ఫోన్: 040 - 24753827, 66758707, ఓబిని:24557946
సంపాదకులు - విఠల్‌రావు ఆర్య ప్రధాన్ సభ

॥ ओ३म् ॥

वैदिक मिशन मुम्बई

डी ३०९, मिल्टन अपार्टमेन्ट, जुहू कोलिवाड़ा, मुम्बई - ४०० ०१९. चलभाष : ९८६९६६८१३०

वैदिक विरक्त सम्मेलन (संगोष्ठी)

दिनांक २२-२३ मार्च २०१४

माननीय श्री ______________________________

____

सादर नमस्ते,

परमात्मा की कृपा से आप स्वस्थ एवं सानन्द होंगे। आर्य प्रतिनिधि सभा मुंबई के सौजन्य से वैदिक मिशन मुम्बई की ओर से दिनांक २२-२३ मार्च २०१४ को **स्वामी प्रणवानन्दजी सरस्वती** (दिल्ली) की अध्यक्षता में आर्य समाज सान्ताक्रुज, मुम्बई में **ऋषि दयानन्द और उनकी बृहत्त्रयी** के विषय में संगोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है। जिसमें स्वामी आर्यवेशजी (दिल्ली), स्वामी धर्मानन्दजी (उड़ीसा), स्वामी विवेकानन्दजी (मेरठ), विशेष अतिथि के रूप में उपस्थित रहेंगे।

इस संगोष्ठी में भारत के लगभग पचास संन्यासी, महात्मा एवं वैदिक विद्वान् भाग ले रहे हैं। जो ऋषि दयानन्द के व्यक्तित्व और उनके द्वारा रचित ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका एवं संस्कार विधि में वर्णित विषयों की महत्ता, उपयोगिता और इनके प्रचार-प्रसार के विविध उपायों के विषय में गहन चिन्तन किया जायेगा।

आप ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों के आधिकारिक एवं आर्य जगत् के प्रतिष्ठित वैदिक विद्वान् हैं। अतः निवेदन है कि उपरोक्त विषय पर शीघ्र ही अपना शोध लेख लिखकर भेजने की कृपा करें। अथवा लेख की संक्षिप्त रूपरेखा एक पृष्ठ में भेज दें। लेख अपने साथ लेकर भी आ सकते हैं। आप अपने आने जाने का आरक्षण स्वयं करा लें जिससे आपके मार्गव्यय की व्यवस्था वैदिक मिशन की ओर से हो जायेगी।

धन्यवाद।

भवदीय

सोमदेव शास्त्री
अध्यक्ष - वैदिक मिशन मुम्बई
३०९, मिल्टन अपार्टमेन्ट, जुहू कोलिवाड़ा,
मुम्बई - ४०० ०४९. मो. : ९८६९६६८१३०

THE VIEWS & THE NEWS PUBLISHED IN THIS ISSUE MAY NOT NECESSARILY BE AGREEABLE TO THE EDITOR

संपादकः श्री विठ्ठल राव आर्य प्रधान सभा ने सभा की ओर से कलांजली प्रेस विठ्ठलवाडी में मुद्रित करवा कर प्रकाशित किया। प्रकाशकः आर्य प्रतिनिधि सभा आं.प्र.सु.बाज़ार,हैदराबाद